सत्यमेव जयते

भाकृअनुप
ICAR

CPRI

POTATO
INDIAN ASSOC.
ESTD. 1974

स्मारिका

पूर्वांचल क्षेत्रीय कृषि मेला

(ग्रामीण आजीविका सुरक्षा के लिए बागवानी)

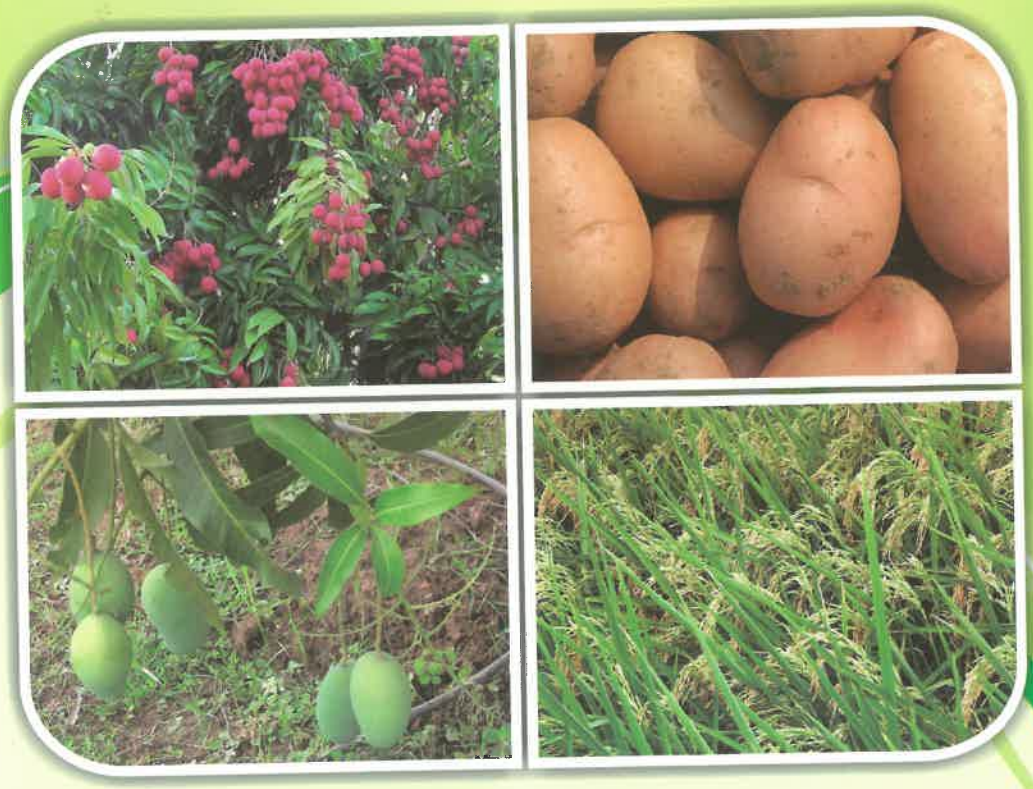

नाबार्ड
NABARD

स्थान: केन्द्रीय आलू अनुसंधान केन्द्र, पटना

19-21 फरवरी, 2015

प्रायोजक: कृषि एवं सहकारिता विभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार

आयोजक: भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान व भारतीय आलू संघ, शिमला

ऊर्जा

खुदाई के पश्चात आलू को 32° F पर भण्डारण करने की विधि अब बहुत पुरानी हो चुकी है,

- आलू में उपस्थित स्टार्च तेजी से शर्करा में परिवर्तित हो जाता है।
- आलू में मिठास की मात्रा बढ जाती है।
- प्रोसेसिंग में यह आलू गहरा भूरा / काला पड़ जाता है।

पिछले 10-12 वर्षो से आलू का भण्डारण UPL की एक अनोखी पद्धती से किया जा रहा है,

- आलू का भण्डारण 48-52° F पर करते है।
- आलू का स्टार्च शर्करा में नही परिवर्तित होता।
- ऊर्जा उपचारित आलू का स्वाद भी ताजा आलू जैसे ही होता है।
- आलू को अंकुरण, सिकुड़न एवं मिठास की समस्या से मुक्ति मिल जाती है।

स्वाद में उत्तम, स्वास्थ्य का खज़ाना,
आया 'मिठास रहित आलू' का ज़माना...

किसानों के लाभ

- ✓ मंडियों में उचित एवं अधिक मूल्य की प्राप्ती।
- ✓ बाजार में भारी माँग।
- ✓ अधिक समय तक भण्डारण योग्य।
- ✓ अंकुरण की समस्या से मुक्ति।

उपभोक्ता के लाभ

- ✓ बाजार में वर्ष भर मिठास रहित (LSG) आलू उचित मूल्य पर उपलब्ध।
- ✓ अन्य कच्ची, पहाडी एवं भण्डारित आलू के मुकाबले खाने व पकाने में उत्तम।
- ✓ साधारण आलू की तुलना में लम्बे समय तक सुरक्षित।

DECCO
UPL Limited

स्मारिका

पूर्वांचल क्षेत्रीय कृषि मेला

19–21 फरवरी, 2015

केन्द्रीय आलू अनुसंधान केन्द्र, पटना

सत्यमेव जयते

भाकृअनुप
ICAR

CPRI

POTATO
INDIAN ASSOC.
ESTD. 1974

प्रायोजक

कृषि एवं सहकारिता विभाग
कृषि मंत्रालय, भारत सरकार

आयोजक

केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला
भारतीय आलू संघ, शिमला

मुद्रित: जनवरी, 2015 (4000 प्रतियां)

सम्पादक
डा. जगेश कुमार तिवारी
डा. राकेश मणी शर्मा
डा. नरेन्द्र कुमार पाण्डेय

हिन्दी टंकण
श्री सुरेश कुमार एवं श्री राजदीप बक्स

प्रकाशक
डा. बीर पाल सिंह
अध्यक्ष, भारतीय आलू संघ एवं
निदेशक, केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान
शिमला–171001, हि.प्र., भारत
फोन: 0177–2625073, फैक्स: 0177–2624460
ई.मेल: dircpri@sancharnet.in
वेबसाईट: http://cpri.ernet.in

"The financial assistance received from Research and Development Fund of National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD) towards publication of this "Smarika" of the fair is gratefully acknowledged."

मुद्रण: वीनस प्रिंटर और प्रकाशक, बी–62/8, नारायणा इंडस्ट्रियल एरिया, फेज–II, नई दिल्ली–110028

विषय सूची

संदेश

लेख

1.	देश के पूर्वी मैदानी भाग में आलू परिदृश्य तथा परिकल्पना	1
2.	पूर्वी क्षेत्र में दूसरी हरित क्रांति की प्रमुख चुनौतियां	11
3.	भारत के कृषि विकास में कृषि विज्ञान केन्द्र की भूमिका	15
4.	पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में बागवानी का प्रोन्नयन–केवीके की भूमिका	21
5.	श्री विधि (एस.आर.आई.) तकनीक से धान/संकर धान की खेती	28
6.	उत्तर–पूर्वी मैदानी क्षेत्रों के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान क्षेत्रीय केन्द्र, पूसा द्वारा किये गये शोध कार्य एवं गेहूं के उन्नत प्रभेदों की अनुशंसित सघन सस्य पद्धतियां	33
7.	लीची विकास हेतु नई तकनीकें	42
8.	बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर द्वारा पूर्वी मैदानी क्षेत्रों के किसानों हेतु किसान हितैशी तकनीकों का विकास एवं विस्तार	50
9.	केन्द्रीय कन्द फसल अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, भुवनेश्वर द्वारा पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में कन्द फसल के उत्पादन हेतु किसान हितैशी तकनीकों का विकास एवं विस्तार	59
10.	भारत के पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में प्याज एवं लहसुन के शोध एवं विकास में राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान की भूमिका	66
11.	सूचना संचार प्रौद्योगिकीकरण के द्वारा महिला किसानों के जीविकोपार्जन में उन्नति	73
12.	बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची द्वारा पूर्वी पठारी क्षेत्रों के किसानों हेतु उपयुक्त तकनीकों का विकास एवं विस्तार	78

केशरी नाथ त्रिपाठी
राज्यपाल, बिहार

राजभवन, पटना–800022
दूरभाष : 0612–2217626
फैक्स : 0612–2786184

31 जनवरी , 2015

संदेश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला व इंडियन पोटेटो ऐसोशिएशन के संयुक्त तत्वावधान में त्रिदिवसीय "पूर्वी जोन–क्षेत्रीय कृषि मेला" का आयोजन केन्द्रीय आलू अनुसंधान केन्द्र, पटना में आगामी 19 से 21 फरवरी, 2015 तक होने जा रहा है।

पूर्वी जोन में इस क्षेत्रीय कृषि मेले का आयोजन एक बहुत ही प्रशंसनीय निर्णय है। 'दूसरी हरित क्रांति' इसी क्षेत्र में संभव है, जिससे देश की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को और अधिक मजबूती मिलेगी। मुझे विश्वास है कि यह कृषि मेला, कृषि प्रक्षेत्र के समग्र विकास एवं प्रतिभागी कृषकों के लिए अत्यंत उपयोगी एवं फलदायी सिद्ध होगा।

मैं इस मेले की सफलता की शुभकामना करता हूँ।

(केशरी नाथ त्रिपाठी)
राज्यपाल, बिहार

राधा मोहन सिंह
RADHA MOHAN SINGH

सत्यमेव जयते

D.O. No. 381 /AS

कृषि मंत्री
भारत सरकार
MINISTER OF AGRICULTURE
GOVERNMENT OF INDIA

4, फरवरी, 2015

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि दिनांक 19 से 21 फरवरी, 2015 के दौरान केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला के क्षेत्रीय केन्द्र पटना में एक त्रिदिवसीय 'पूर्वी जोन- क्षेत्रीय कृषि मेला' का आयोजन किया जा रहा है।

यह सर्वविदित है कि पूर्वी मैदानी क्षेत्र में कृषि की अपार सम्भावनाएं हैं क्योंकि यह क्षेत्र अपनी उपजाऊ भूमि, प्रचुर श्रम शक्ति एवं सिंचाई योग्य जल के लिए जाना जाता है। इनका दोहन करके देश की खाद्य समस्या का समाधान किया जा सकता है। इन्हीं प्राकृतिक संसाधनों की वजह से दूसरी हरित क्रांति का प्रादुर्भाव भी इस क्षेत्र से होना है। इसलिए पूर्वी क्षेत्र में इस मेले का आयोजन एक बेहद सराहनीय कदम है। किसानोंको यहां कृषि से संबंधित न केवल नई तकनीकों व जानकारियों से अवगत कराया जाएगा, बल्कि उन्हें स्वयं विषय-वस्तु विशेषज्ञों से चर्चा करने का अवसर भी प्राप्त होगा जिससे उनको अपने उत्पादन व उत्पादकता बढ़ाने में मदद मिलेगी और उत्पादों के उचित विपणन के अवसर का भी ज्ञान प्राप्त होगा।

संस्थान द्वारा क्षेत्रीय कृषि मेले का आयोजन एक सराहनीय प्रयास है। मैं इस मेले की सफलता की मंगल कामना करता हूँ।

(राधा मोहन सिंह)

Office : Room No. 120, Krishi Bhawan, New Delhi-110 001 Tel.: 23383370, 23782691 Fax : 23384129

डॉ0 संजीव कुमार बालियान
DR. SANJEEV KUMAR BALYAN

सत्यमेव जयते

कृषि राज्य मंत्री
भारत सरकार
Minister of State for Agriculture
Government of India

28 JAN 2015

संदेश

यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला एवं इंडियन पोटेटो एसोशिएशन संयुक्त रूप से केन्द्रीय अनुसंधान केन्द्र, पटना में एक क्षेत्रीय कृषि मेले का आयोजन 19 से 21 फरवरी, 2015 के दौरान कर रहें है।

भारत की खाद्य सुरक्षा में कृषि, बागवानी, मत्स्य एवं पशुपालन का महत्वपूर्ण स्थान है यद्यपि खाद्य सुरक्षा के मामले में हमारा देश पूर्णरूप से आत्मनिर्भर है परन्तु स्वस्थ भारत के लिये उच्च गुणवत्ता युक्त भोजन की आवश्यकता है। ऐसे में इस क्षेत्रीय कृषि मेले का आयोजन एक बहुत ही महत्वपूर्ण कदम है जिसमें कि कृषक भाइयों को सभी क्षेत्रों के विशेषज्ञों के साथ परस्पर संवाद का अवसर प्राप्त होगा। मुझे आशा है कि सभी किसान भाई इससे लाभान्वित होंगे एवं यहां प्राप्त नवीन जानकारियों से अपने व्यवसाय में प्रगति कर अपने जीवन स्तर को ऊंचा उठायेंगे।

मैं इस मेले की सफलता की शुभकामनायें देता हूँ एवं आयोजनकर्ताओं का धन्यवाद करता हूँ।

(डॉ. संजीव कुमार बालियान)

199-Q, Krishi Bhawan, New Delhi-110 001 Tel. : 91-11-23782343 Fax : 91-11-23074190

डा. एस. अय्यप्पन
सचिव एवं महानिदेशक
Dr. S. AYYAPPAN
SECRETARY & DIRECTOR GENERAL

भारत सरकार
कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग एवं
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली 110 001

GOVERNMENT OF INDIA
DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH & EDUCATION
AND
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
MINISTRY OF AGRICULTURE, KRISHI BHAVAN, NEW DELHI 110 00
Tel.: 23382629; 23386711 Fax: 91-11-23384773
E-mail: dg.icar@nic.in

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला एवं इंडियन पोटेटो एसोसिएशन द्वारा संयुक्त रूप से दिनांक 19–21 फरवरी, 2015 को केन्द्रीय आलू अनुसंधान केन्द्र, पटना में क्षेत्रीय कृषि मेला आयोजित किया जा रहा है।

भारतीय कृषि ने पिछले कुछ दशकों में उल्लेखनीय प्रगति की है जिसके परिणामस्वरूप आज भारत खाद्य के मामले में एक आत्मनिर्भर राष्ट्र है और साथ ही इसका आयातक से निर्यातक राष्ट्र के रूप में रूपांतरण भी हुआ है। यह उपलब्धि निःसंदेह भारतीय कृषि वैज्ञानिकों के अनुसंधान परिणामों एवं किसानों की कड़ी मेहनत से ही मिली है। देश की लगातार बढ़ रही जनसंख्या का भरण पोषण करने के लिए निरन्तर नवीन अनुसंधानों जो कि क्षेत्र व मौसम के अनुकूल हों, को किसानों तक पहुंचाने की जरूरत है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह मेला कृषि अनुसंधान की नवीनतम जानकारी को किसानों तक पहुंचाने में निश्चित रूप से सहायक होगा। मैं, कृषि मेला की सफलता के लिए शुभकामनाएं देता हूं।

एस. अय्यप्पन

(एस. अय्यप्पन)

डॉ एन. के. कृष्ण कुमार
उप महानिदेशक (बाग. वि.)
Dr. N. K. Krishna Kumar
DEPUTY DIRECTOR GENERAL (HORTICULTURAL SCIENCE)

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन-II
पूसा, नई दिल्ली -110 012

INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
KRISHI ANUSANDHAN BHAWAN-II
PUSA, NEW DELLHI-110 012

संदेश

आलू दक्षिण अमेरिका का देशज है जिसे पुर्तगालियों द्वारा लगभग सत्तरहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में भारत लाया गया था । खाद्य एवं पोषण सुरक्षा में इसके महत्व को ध्यान में रखते हुये सन 1935 ई. की अवधि में इस फसल पर भारतवर्ष में अनुसंधान एवं विकास कार्य आरंभ किया गया था । कालांतर में केंद्रीय आलू अनुसंधान की स्थापना सन 1949 ई. में पटना, बिहार में की गई जिसे बाद में शिमला, हिमाचल प्रदेश में प्रतिस्थापित कर दिया गया ।

आलू उत्पादन बढ़ाने में समुचित किस्मों, उत्तम गुणवत्ता के स्वस्थ बीजों और उन्नत उत्पादन तकनीकों का अत्यधिक महत्व है। अपनी स्थापना के लगभग छः दशकों से कुछ ही अधिक अवधि में संस्थान द्वारा अधिक उत्पादकता और रोग प्रतिरोधी 50 से अधिक किस्मों का विकास किया गया है। साथ ही स्थान विशेष के लिए उपयोगी उत्पादन और पौध सुरक्षा की प्रभावी तकनीकों का विकास और कृषकों को इन तकनीकों का प्रदर्शन और प्रशिक्षण भी दियागया है। आलू फसल कई प्रकार के विषाणु, कवक और जीवाणु जनित रोगों तथा कीटों द्वारा दुष्प्रभावित होती है जिससे कृषकों को अपार क्षति का सामना करना पड़ता है। ऐसी असुविधावों का सामना करने और कृषकों के हितार्थ संस्थान द्वारा उत्तम गुणवत्ता के बीज उत्पादन करने की सीड प्लोंट तकनीक एवं ऐरोपोनिक्स तकनीकों का सफलता पूर्वक विकास एवं प्रदर्शन किया गया है। इसी तरह से पछेती झुलसा के पूर्वानुमान के लिए *इंडो ब्लाइटकास्ट* तथा *झुल्साकास्ट*, पोटैटो पेस्ट मैनेजर और पोटैटो क्रॉप शेडुलिंग जैसी सलाहकारी सेवाएँ तकनीकी दृष्टिकोण से आलू उत्पादन में मील का पत्थर साबित हुई हैं। ऐसे ही अथक प्रयासों के फलस्वरूप वर्तमान समय में भारतवर्ष 4 करोड़ 50 लाख मीट्रिक टन आलू उत्पादन के साथ विश्व में दूसरे स्थान पर है ।

पछेती झुलसा आलू की फसल में एक भयानक बीमारी है। इसी तरह से बीज के रूप में उपयोग किए जाने वाले आलू के कन्दों में विषाणु रोगों की जटिल समस्या होती है और इसमें थोड़ी सी असावधानी कालांतर में बड़ी समस्या का कारण बन सकती है। इन समस्यों के प्रति हमें अत्यधिक सावधानी बरतने की आवश्यकता है । आलू उत्पादन से जुड़ी हुई समस्याओं के प्रति किसानों को जागरूक रखने और उत्पादन की उन्नतशील तकनीकों को कृषकों तक प्रभावशाली रूप में अनवरतपहुँचाने से भविष्य में भी इसकाउत्पादन उत्तरोत्तरबढ़ाने में हमें आशातीत सफलता मिल सकती है । इस क्रम में भा. कृ. अनु. प. - केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला एवं भारतीय आलू संगठन द्वारा संयुक्त रूप से दिनांक 19 से 21 फरवरी के दौरान एक त्रिदिवसीय कृषि मेले का आयोजन पटना, बिहार में किया जा रहा है । मेले में प्रतिभागियों, विशेष रूप से कृषकों के हितार्थ; कृषि, बागवानी, मत्स्य एवं पशुपालन तथा प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन से संबन्धित शोध एवं विकास संस्थाओं द्वारा अत्यधिक उपयोगी नवीनतम तकनीकी ज्ञान का प्रसारण और उत्पादों को प्रदर्शित किया जा रहा है।

इस मेले के सफल आयोजन की कामना करते हुए सभी को मैंअपनी हार्दिक शुभकामनायें प्रेषित करता हूँ ।

एन. के. कृष्ण कुमार

(एन. के. कृष्ण कुमार)

डॉ. अशोक कुमार सिंह
उप महानिदेशक (कृषि प्रसार)
Dr. A.K. Singh
Deputy Director General
(Agricultural Extension)

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन-I, पूसा, नई दिल्ली 110 012
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
KRISHI ANUSANDHAN BHAVAN-I, PUSA, NEW DELHI - 110 012
Ph. : 91-11-25843277 (O), Fax : 91-11-25842968
E-mail: ddgextension@gmail.com; aksicar@gmail.com

सन्देश

कृषि वैज्ञानिक अनुसंधानों के नतीजों को आम जनता तक पहुंचाने में अन्य माध्यमों के अलावा कृषि मेलों व गोष्ठियों का आयोजन एक सशक्त माध्यम है। इसके द्वारा वैज्ञानिक अनुसंधानों की सूक्ष्म जानकारियों को किसानों तक उनकी भाषा में आसानी से पहुंचाया जा सकता है। इस परिपेक्ष्य में केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला एवं इंडियन पोटेटो एसोसिएशन द्वारा पटना में आयोजित कृषि मेला (दिनांक 19–21 फरवरी, 2015) किसानों को नवीन जानकारियां उपलब्ध कराने का एक महत्वपूर्ण स्रोत होगा जिससे इस मेले में भाग लेने वाले अपेक्षित राज्यों, बिहार, उडिसा, बंगाल तथा झारखंड के हजारों किसानों को लाभ प्राप्त होने की उम्मीद है। इस मेले में पूर्वी क्षेत्रों के किसान जो कृषि, बागवानी, मत्स्य व पशुपालन में अन्य क्षेत्रों से पिछड़े हैं, संबंधित समस्त नवीन जानकारियां एक ही छत के नीचे हासिल कर सकेंगे व उन्हें अपनाकर वे कृषि को जीविका का सुदृढ़ श्रोत बना सकेंगे।

मैं इस मेले की सफलता के लिए आयोजकों एवं किसानों को शुभकामनाऐं देता हूं।

(अशोक कुमार सिंह)

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय
BIRSA AGRICULTURAL UNIVERSITY
कौंके, राँची-834006, झारखण्ड, भारत
KANKE, RANCHI-834 006, Jharkhand, INDIA

Dr. George John
Ph.D.
Vice-Chancellor

Ref. No. : 16/C

Date : 31-01-2015

संदेश

यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई कि केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला और इंडियन पोटेटो एसोसिएशन के सहयोग से 19 से 21 फरवरी, 2015 तक पटना स्थित केन्द्रीय आलू अनुसंधान केन्द्र में त्रिदिवसीय पूर्वी जोन क्षेत्रीय कृषि मेला का आयोजन किया जा रहा है। कृषि मेला में चूंकि खेती–बारी, मत्स्यपालन, पशुपालन तथा कृषि उद्योग से जुडे संगठनों द्वारा अपनी नवीनतम प्रौद्योगिकी, उत्पाद एवं सेवाओं को प्रदर्शित किया जाता है, इसलिए ऐसा आयोजन प्रौद्योगिकी प्रसार का एक महत्वपूर्ण माध्यम होता है।

आशा है इस मेला में आनेवाले किसान भाइयों, कृषक महिलाओं, गैर–सरकारी संगठनों के प्रतिनिधियों, विकास विभाग के अधिकारियों तथा कृषि में रूचि रखनेवाले लोगों का पर्याप्त ज्ञानवर्धन होगा तथा इस अवसर पर प्रकाश्य स्मारिका कृषि अनुसंधान एवं विकास सम्बन्धी सन्दर्भ सामग्री का काम करेगी।

आयोजन की सफलता के लिए मेरी हार्दिक मंगलकामना है।

जॉर्ज जॉन
जॉर्ज जॉन

Ph. : +91-651-2450500 (O) Fax : 0651-2450850
E-mail : vc@bauranchi.org Website : www.bauranchi.org

Visit us at: www.ouat.ac.in
Tel: 0674-2397700 (O), 2561606 (R)
FAX : 0674-2397780
E-mail: vcouat@gmail.com
ORISSA UNIVERSITY OF AGRICULTURE & TECHNOLOGY
BHUBANESWAR – 751003, ODISHA

Prof. M. Kar
Vice-Chancellor

January 30, 2015

संदेश

मुझे यह जानकर बेहद प्रसन्नता हेा रहीहे कि केन्द्रीय आलु अनुसंधान संस्थान, शिमला व इंड़िआन पोटेटेा रिसर्च संस्थानके सहयेाग से एक तिन दीबसीय पूर्बी जेान कृषि मेला केन्द्रीय आलु अनुसंधान केन्द्र पाटना मे १९ से २१ फरबरी २०१५ के दैरान ओयेाजन किया जा रहा है। यहि वह जगह हि जहॉपर सबसे पहले आलु अनुसंधान की शुरुवात हुइ थी। मेरे खयाल मे यह बिशाल मेला बिलकुल् सही समय पर आयेाजन किया जा रहाहे जब पूरे देश खास तैार पे पूर्बी भारतिय राज्येां केा उच्च मान की आलुके बीज व उसे उगाने की सही तकनिक की जरूरत है। पूर्बी भारतिय राज्यें जैसी पश्चीम बंगाल, बिहार, असम, झारखडं, पूर्बी उत्तर प्रदेश व ओडिशा के हिस्सेमे समग्र आलु उगायी जानेबाले इलाके की ५० फीसदि से ज्यादा इलाके हेाने कि साथ साथ उतने हि मात्रा के आलु भि उगायी जाती है। इस् स्थिती केा मद्दे नजर रखते हुए मे आशा रखता हुॅ कि इस मेले मे भाग लेने वाली सभि किसान भाइयें केा बेहद फायदा हेागेा।

मे इस मेले की भारी सफलता कामना करता हुॅ।

(मनोरञ्जन कर)

राजेन्द्र कुमार तिवारी,
आई.ए.एस.
प्रबंध निदेशक
Rajendra Kumar Tiwari,
I.A.S.
Managing Director

सत्यमेव जयते

राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड
NATIONAL HORTICULTURE BOARD
कृषि मंत्रालय, भारत सरकार
Ministry of Agriculture Government of India

संदेश

मुझे यह जानकर बहुत हर्ष एवं प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि केन्द्रिय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला व इंडियन पोटेटो एसोसिएसन क सहयोग से एक त्रिदिवसीय "पूर्वी जोन–क्षेत्रीय कृषि मेला" केन्द्रिय आलू अनुसंधान केन्द्र, पटना में 19 से 21 फरवरी, 2015 के दौरान आयोजित किया जा रहा है

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जब हम ज्ञान तथा तकनीकी के माध्यम से कृषकों की आय–वृद्वि का प्रयास कर रहे हैं, कृषक मेले का आयोजन अत्यंत सामयिक एवं उपयोगी है। मुझे विश्वास है कि इस राष्ट्रीय मेले में बहुत से सामयिक विषयों पर कृषकों, कृषि वैज्ञानिकों एवं नीति–निर्धारकों के मध्य विचार–विनिमय होगा जिससे कृषि, बागवानी, मत्स्य एवं पशुपालन के विकास के लिए महत्वपूर्ण दिशा–निर्देश सुनिश्चित करने मे मदद मिलेगी।

मैं इस राष्ट्रीय मेले के आयोजन हेतु अपनी शुभ कामनायें प्रेषित करता हूँ।

धन्यवाद।

22.1.15

(राजेन्द्र कुमार तिवारी)

Plot No 85, Sector-18, Institutional Area, Gurgaon-122015
Phone: (0124) 2342992 Fax (0124) - 2342991 E-mail: mdnhb@yahoo.com Web: www.nhb.gov.in

सत्यमेव जयते

डा. एस. के. मल्होत्रा
बागवानी आयुक्त
फोन - 011-23381012
फ़ैक्स - 011-23383712
ई-मेल - hc-dac@nic.in

भारत सरकार
कृषि मंत्रालय
(कृषि एवं सहकारिता विभाग)
कृषि भवन, नई दिल्ली-110 001
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF AGRICULTURE
(DEPARTMENT OF AGRICULTURE & COOPERATION)
KRISHI BHAWAN, NEW DELHI-110 001

दिनांक: 28 जनवरी, 2015

संदेश

देश के वर्तमान कृषि परिवेश में बागवानी फसलों को दिये जाने वाले महत्व एवं इसके विविधिकरण से बागवानी के अंतर्गत क्षेत्रफल एवं उत्पादन में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। बढती जनसंख्या, उपभोक्ताओं की बढती खुशहाली तथा पौष्टिक भोजन के प्रति जागरूकता के कारण फलों, सब्जियों, मसालों, कंदीय फसलों इत्यादि की मांग निरंतर बढ़ रही है। बागवानी वाली फसलों में आलू का एक महत्वपूर्ण स्थान है और इसकी खेती लगभग भारत वर्ष के सभी राज्यों में सीमांत से लेकर बड़े किसानों द्वारा की जाती है। विभिन्न परियोजनाओं के अंतर्गत नवीनतम कृषि प्रोद्योगिकीयों का विकास किया गया है। गत दशकों में आलू के उत्पादन व उत्पादकता में सुधार हुआ है जिसका श्रेय उन्नत तकनीकों का किसानों द्वारा उच्च स्तर पर ग्रहण करना है। अधिक उपज तथा गुणवत्ता के लिए आलू के सफल उत्पादन में उचित किस्मों का चुनाव, फसल प्रबंधन तकनीक, फसल सुरक्षा एवं खुदाई के उपरांत रख-रखाव बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है। केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला ने इस प्रकार के कई तकनीकों का विकास करके उल्लेखनीय कार्य किया है तथा अनुकरणीय विकल्पों के रूप में अपने क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्रों पर इनका सफल प्रदर्शन भी किया है।

मुझे ये जानकर अति प्रसन्नता हो रही है कि केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला एक त्रिदिवसीय पूर्वी जॉन – क्षेत्रीय कृषि मेला केंद्रीय आलू अनुसंधान केंद्र पटना में 19-21 फरवरी, 2015 के दौरान आयोजित कर रहा है। जहां बहुत बड़ी संख्या में किसानों और उद्यमियों को नवीनतम प्रोद्योगिकीयों के बारे में जानने का अवसर प्राप्त होगा। तकनीकी सत्र और प्रदर्शन किसानों की समृद्धि के लिए नवीन कृषि प्रोद्योगिकीयों के बारे में जानकारी देंगे।

मैं मेले के आयोजकों को उनके इस प्रयास के लिए धन्यवाद देता हूं तथा मेले की अपार सफलता की कामना करता हूँ।

सुरेश कुमार मल्होत्रा

(एस. के. मल्होत्रा)

डॉ. टी. जानकीराम
Dr. T. Janakiram
सहा. महा. नि. (बाग। वि.)
Asst. Director General
(Hort. Sci.-I)

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
बागवानी विज्ञान संभाग
कृषि अनुसंधान भवन-II
पूसा, नई दिल्ली -110 012
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
HORTICULTURAL SCIENCE DIVISION
KRISHI ANUSANDHAN BHAWAN-II
PUSA, NEW DELLHI-110 012

संदेश

मुझे खुशी है कि भा. कृ. अनु. प. – केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला एवं इंडियन पोटैटो असोशिएशन के संयुक्त तत्वावधान में एक त्रिदिवसीय क्षेत्रीय कृषि मेले का आयोजन 19 से 21 फरवरी, 2015 के दौरान पटना, बिहार में किया जा रहा है। यह सर्वविदित है कि किसी भी देश की उन्नति, विशेषकर विकासशील देशों में, कृषि एवं कृषक का अहम योगदान होता है । भारत जैसे देश में तो इसका महत्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि आज भी देश की 55 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या के जीविकोपार्जन का मुख्य स्रोत कृषि ही है जो कि देश के कुल सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 13.7 प्रतिशत योगदान करता है। ऐसे में उम्मीद है कि यह कृषि मेला कृषकों को उचित मंच उपलब्ध कराएगा जिससे उनको अपने व्यसाय से संबन्धित नवीन तकनीकों की जानकारी उपलब्ध होगी, जिसको अपनाकर वे अपने जीवन स्तर को ऊंचा उठा सकेंगे।

मैं इस कृषि मेले की सफलता की शुभकामनायें देता हूँ ।

(टी. जानकीराम)

मुख्य महाप्रबंधक
Chief General Manager

दिनांक : 02 फरवरी 2015

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि भारतीय आलू संघ एवं केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला द्वारा केन्द्रीय आलू अनुसंधान केन्द्र, पटना में 'क्षेत्रीय कृषि मेला ' का आयोजन दिनांक 19 - 21 फरवरी 2015 तक किया जा रहा है। इस तरह के आयोजन पूर्वी क्षेत्र के विकास के लिए नितांत आवश्यक है। ऐसे आयोजनों से क्षेत्र के किसानों को कृषि संबंधी नई तकनीकों तथा प्रबंधकीय कार्यकलापों को समझने एवं उसे अपनाने की प्रेरणा मिलेगी। साथ ही कृषि उत्पादकता में वृद्धि कर किसानों की आय बढाने एवं राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा हासिल करने में मददगार होगी। बिहार राज्य सहित समस्त पूर्वी भारत में हरित क्रान्ति लाने के लिए इस प्रकार के आयोजन जरुरी है।

भारतीय आलू संघ और केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला द्वारा उक्त मेला के आयोजन तथा इसकी सफलता के लिए मै शुभकामनाएं देता हूँ।

आर. के. दास

(रंजीत कुमार दास)
मुख्य महा प्रबंधक
नाबार्ड, बिहार क्षेत्रीय कार्यालय
पटना

राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक
बिहार क्षेत्रीय कार्यालय
मौर्य लोक कॉम्प्लेक्स, पटना-800 001
ई-मेल : pat_nab@dataone.in, patna@nabard.org

National Bank for Agriculture and Rural Development
Bihar Regional Office
Maurya Lok Complex, Patna-800 001
Email : pat_nab@dataone.in, patna@nabard.org

क्षेत्रीय परियोजना निदेशालय, क्षेत्र–II
ZONAL PROJECT DIRECTORATE, ZONE- II
भारतीय कृषि अनुसंघान परिषद
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
साल्टलेक, कोलकाता– 700 097
Salt Lake, Kolkata–700 097
Website: www.zpd-ii.com

डा. अजय कुमार सिंह
क्षेत्रीय परियोजना निदेशक
Dr. A.K. Singh
Zonal Project Director

संदेश

उन्नत खेती के तरीकों के साथ व्यापक रूप से लोगों तक पहुंचने के उद्देश्य से देश भर में कृषि मेले का आयोजन किया जा रहा है। वैज्ञानिक पद्धतियों के बारे में जागरूकता पैदा करने वाले, प्रगतिशील किसानों के साथ बातचीत की सुविधा एवं उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए दूसरों को प्रेरित करने के क्रम में सफल किसानों को पहचानना, किसान मेले के कुछ अन्य लाभ हैं।

भारतीय आलू संघ (Indian Potato Association) के सहयोग से केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला 19-21 फरवरी, 2015 के दौरान पटना में एक क्षेत्रीय कृषि मेला का आयोजन कर रहा है। यह बृहद आयोजन प्रचुर जानकारी के लिए एक उत्कृष्ट मंच प्रदान करेगा। किसानों, किसान महिलाओं, विशेषज्ञों, विकास पदाधिकारियों, निवेशित (input) व्यापारियों, बैंकरों और अन्य हितधारकों के लिए यह आयोजन अत्यधिक उपयोगी साबित होगा।

मैं अत्यन्त हर्षित हूं कि इस क्षेत्रीय कृषि मेले को चिन्हित करने के लिए एक स्मारिका लाई जा रही है।

मैं क्षेत्रीय कृषि मेले के भव्य सफलता की कामना करता हूं।

(अजय कुमार सिंह)

भूमि विहार कम्पलेक्स, ब्लाक–जी.बी.सेक्टर–3, साल्टलेक, Bhumi Vihar Complex, Block-GB, Sector-III, Salt Lake,
ईमेलE-mail: zpdkolkata@gmail.com; फैक्सFax: 033-23352355

भाकृअप–आंचलिक परियोजना निदेशालय, क्षेत्र–7

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्

ज.ने.कृ.वि.वि., पो.आ.अधारताल, जबलपुर– 482 004 (म.प्र.)

ICAR-ZONAL PROJECT DIRECTORATE, ZONE-VII

INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH

JNKVV, P.O. Adhartal, Jabalpur – 482 004 (MP)

डॉ. अनुपम मिश्रा
आंचलिक परियोजना निदेशक

Dr. Anupam Mishra
Zonal Project Director

Phone : 0761-2680807, 2680158 O)
2680383, 09425151947 (M)
Fax : 0761-2680485
E-mail : zpd7jabalpur@gmail.com,
zcunit@rediffmail.com
Website : www.zpd7icar.nic.in

F.No. 1-1/ PME Cell/2014-15/ Date : 02.02.2015

संदेश

भारतीय कृषि, विकास के पथ पर अनवरत गतिशील है और इस गति की दर को बरकरार रखते हुए और बढाने की जरूरत है । इस आशातीत विकास में किसानो एवं कृषि में कार्यरत महिलाओ का अमूल्य योगदान है जो कि कृषि वैज्ञानिको द्वारा ईजाद किये गये तकनीकों एवं कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा संस्तुत किये जाने के उपरांत अपने कृषि कार्य में अपनाकर, अपने उत्पादकता एवं आमदानी में वृद्धि किये है ।

भारत की आर्थिक विकास का मॉडल कृषि आधारित है । और लगभग 60 प्रतिशत लोग कृषि से जुड़कर अपना रोजगार एवं जीवन यापन करते है । अतः इसके विकास की दर बढ़ाने से शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे लाखो कृषक परिवारों का जीवन प्रभावित होता हैं। शोधकर्ताओं का भी मानना हैं कि कृषि विकास की दर में वृद्धि ही सबसे ज्यादा लोगो को फायदा पहुँचाती क्योंकि भारत में कृषि आम जनजीवन के आजिविका से जुड़ी है ।

वर्तमान में भारत के कृषि विकास में कृषि विज्ञान केन्द्रों अहम भूमिका निभा रहे हैं। अभी देश में लगभग 641 कृषि विज्ञान केन्द्र कार्य कर रहे हैं। जोन –7 जो कि मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ एवं उड़ीसा राज्यों में अवस्थित 100 कृषि विज्ञान केन्दों तकनीकी एवं वित्तीय कियाकलापों की देखभाल में बड़े सुचारू रूप से कर रही है इन राज्यों में कृषि विज्ञान केन्द्रों के कार्यों को राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर सराहा एवं सम्मानित किया गया हैं। कृषि विज्ञान केन्द्रों का राज्य सरकार के साथ उचित तालमेल में काम करने से इन राज्यो को लगातार तीन वर्षों से 'कृषि कर्मण पुरूस्कार' से भारत सरकार द्वारा नवाजा गया हैं। इसके अलावा कृषि विज्ञान केन्द्रों के वैज्ञानिकों को जिला एवं राज्य स्तर पर अनेक पुरूस्कार एवं सम्मान द्वारा सम्मानित किया जा रहा हैं।

जोन–7 के अर्न्तगत कार्यरत कृषि विज्ञान केन्द्रों ने इन राज्यों में रिज एवं फरोअ, रेज्ड़ बेड़, कडकनाथ प्रजाति, दलहन की अधिक उत्पादकता, फसल सघनता पद्धति धान में एसआईआर, गेहूँ में एस डब्लू आई,सरसों में एसएमआई, मधुमक्खी पालन, सोयावीन की उपज एवं बीज उत्पादन,जलवायु सहिष्णु तकनीकों का सफल उपयोग कृषक प्रक्षेत्रों पर दिखाया हैं।

मेरे विचार मे **'पूर्वी जोन –क्षेत्रीय कृषि मेला'** कृषि विकास की ओर एक महत्वपूर्ण कदम हैं।

अनुपम मिश्रा
(अनुपम मिश्र)

देश के पूर्वी मैदानी भाग में आलू: परिदृश्य तथा परिकल्पना

मनोज कुमार[1], बीर पाल सिंह[2] एवं आर.आर. बाकडे[1]

[1]केंद्रीय आलू अनुसंधान केंद्र, पटना, बिहार
[2]केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला

परिचय

आलू विश्व की मुख्य खाद्य फ़सलों में चावलए मक्का और गेहूँ के बाद चौथे स्थान पर और कंदीय फ़सलों में शीर्ष पर आता है। लगभग 150 देशों में उगाई जाने वाली आलू को अरबों लोगों के द्वारा भोजन में उपयोग लाया जाता है। पिछले कुछ दशकों में आलू में जहां विकसित देशों ने अग्रणी भूमिका निभाई थी अभी के समय में आलू उत्पादन विकासशील देशों में ज्यादा केंद्रित हो गया है। भारत वर्ष सर्वाधिक आलू उत्पादक देशों में चीन के बाद दूसरे स्थान पर आता है। यह फसल देश की खाद्य सुरक्षा तथा कृषि आर्थिकी में महत्वपूर्ण योगदान देने में सक्षम है। आलू देश के कृषि सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 2.42%, 1.25% कृषि योग्य भूमि से देता है (वर्ष 2008)।

चित्र 1: केन्द्रीय आलू अनुसंधान केंद्र, पटना स्थित आलू बीज उत्पादन फार्म

हाल के कुछ वर्षों में यूरोपीय और अमेरिकी देशों के मुकाबले अफ्रीकी तथा एशियाई देशों में आलू के क्षेत्रफल तथा उत्पादन में विकास दर ज्यादा देखी गई है। यह एक सकारात्मक विकास है। क्योंकि इन देशों में खाद्य सुरक्षा तथा पोषण की समस्या ज्यादा पाई जाती है। इकाई भूमि से सीमित समय में उत्तम श्रेणी के अधिक खाद्य के उत्पादन में इस फसल का कोई सानी नहीं है। उन्नत तकनीकों का विकास जैसे कि उष्म प्रतिरोधी प्रजातिए सुधरी कृषि उत्पादन तकनीकए जलए पोषक तत्व तथा व्याधि प्रबंधन से इस फसल को धीरे–धीरे शीतोष्ण से उप उष्ण कटबंधीय तथा उष्ण कटबंधीय की तरफ विस्तारित किया जा रहा है। साथ ही फसल लगाने व खुदाई के समयावधि तथा तारीख़ों में लचीलापन तथा गहन फसल प्रणाली तथा अन्तः फसल में उपयुक्तता के कारण इस फसल का विस्तार नई तथा गैर परम्परागत क्षेत्रों में तथा फसल चक्रों के विविधीकरण में हो रहा है।

अन्य कई फ़सलों के मुकाबले आलू के कई विशिष्ट गुण इसे खाद्य तथा पोषण की समस्याओं के निवारण में इसे उत्कृष्ट स्थान देता है। यह कम अवधि में ज्यादा उपजए उत्तम प्रोटीन उत्पादन करता है। इसे लगाने तथा खुदाई के समयावधि तथा तारीख़ों के लचीलापन के कारण यह कई तरह के फसल चक्र तथा अन्तः फसल में इस्तेमाल किया जा सकता है। उत्पादन का लगभग 80% खाने के काम में आता है (फसल सूचकांक 80%द्ध। कंद का बेहद पौष्टिक होना, जिसमें कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, खनिज, विटामिन सी, विटामिन बी के कुछ अंश तथा उच्च गुणवत्ता वाले खाद्य रेशें (dietary fibers) होते हैए पोषण में इसका महत्व को बढ़ाता है। आलू में लगभग 80 प्रतिशत पानी के अलावा 20 प्रतिशत शुष्क पदार्थ पाया जाता है जिसका विवरण चित्र 2 मे दिया गया है।

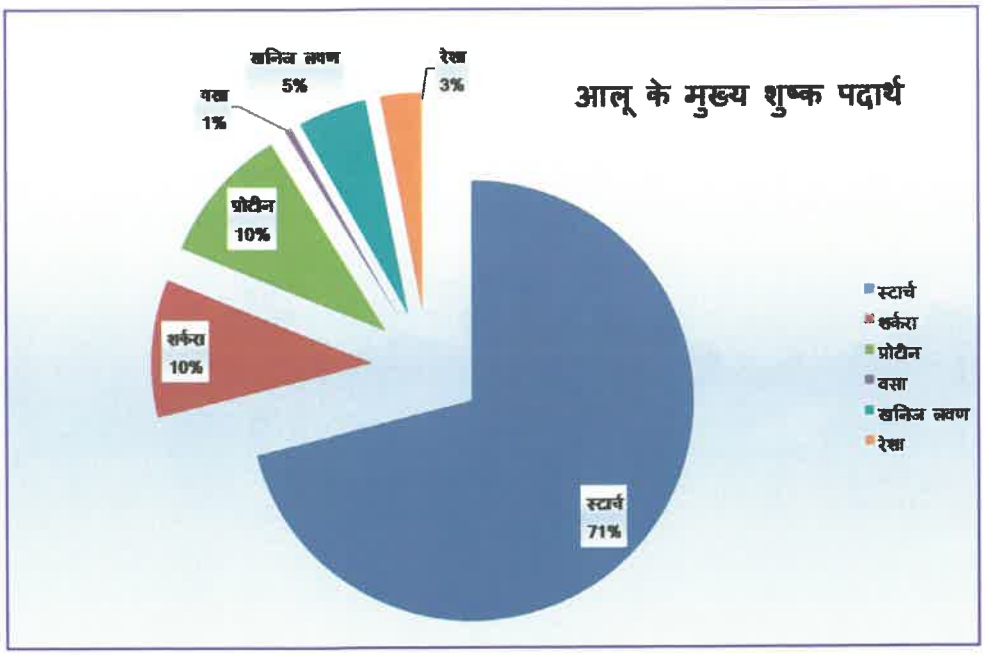

चित्र 2: आलू मे पाये जाने वाले मुख्य पोषक तत्व

भारत में आलू का विस्तारः. इस देश में आलू का क्षेत्रफल 1949.50 में 2.3 लाख हेक्टेयर से बढ़कर 2012–13 में 19.9 लाख हेक्टेयर उत्पादन 15.4 लाख टन से बढ़कर 453 लाख टन तथा उत्पादकता 6.6 टन प्रति हेक्टेयर से बढ़ कर 22.8 टन प्रति हेक्टेयर पहुँच गया है (चित्र–3)। आलू के उत्पादन, विकास की मौलिक बात यह

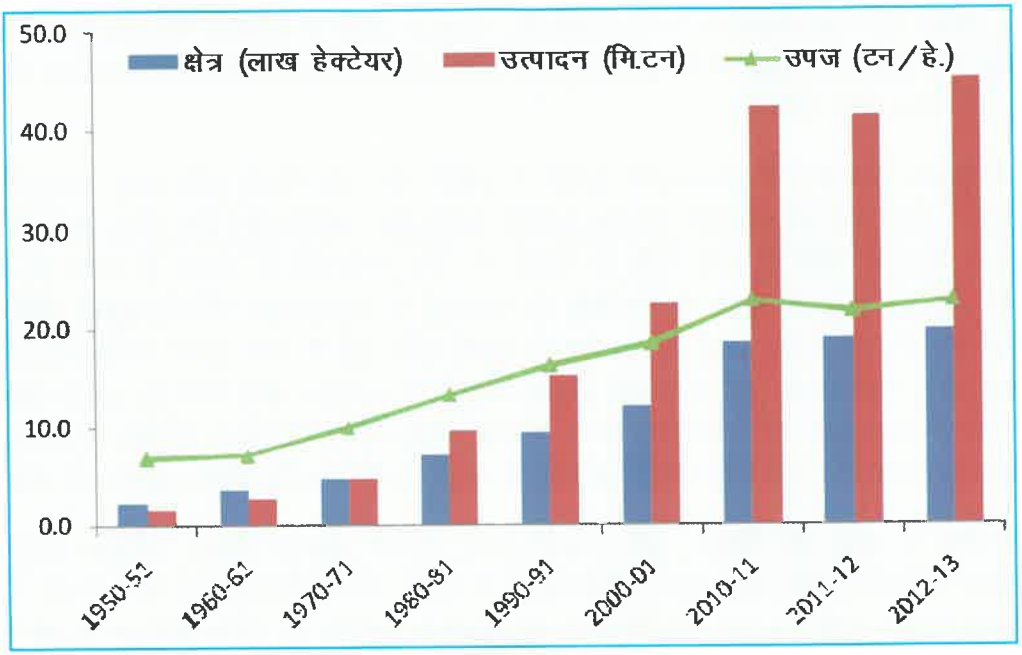

चित्र 3: भारत वर्ष में आलू का क्षेत्रफल उत्पादन तथा उत्पादकता

है कि ये काफी सतत है और दूसरे फ़सलों के मुकाबले बेहतर है। आलू के मुख्य उत्पादक राज्य (सारणी–1) उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल तथा बिहार देश के कुल उत्पादन का 70% से ज्यादा उत्पादन करते हैं। यह सारा

सारणी 1: आलू के मुख्य उत्पादक राज्यों में क्षेत्रफल उत्पादन तथा उत्पादकता (2011-12, 2012-13 का औसत)

राज्य	क्षेत्रफल (000 हे.)	प्रतिशत	उत्पादन (000 टन)	प्रतिशत	उपज (टन/हे.)
उत्तर प्रदेश	585.73	30.04	14277.69	32.89	24.38
पश्चिम बंगाल	381.71	19.58	10642.30	24.51	27.88
बिहार	318.85	16.35	6371.15	14.68	19.98
असम	136.30	6.99	879.34	2.03	6.45
मध्य प्रदेश	93.89	4.82	2057.85	4.74	21.92
पंजाब	96.49	4.95	2118.16	4.88	21.95
गुजरात	82.98	4.26	2447.62	5.64	29.50
झारखंड	63.54	3.26	656.21	1.51	10.33
कर्नाटक	46.31	2.38	590.65	1.36	12.76
हरियाणा	36.10	1.85	647.46	1.49	17.94
अन्य	107.89	5.53	2724.85	6.28	25.26
भारत	1949.60	100.00	43413.20	100.00	22.27

स्रोत: कृषि एवं सहकारिता विभाग, भारत सरकार

क्षेत्र देश के सबसे उपजाऊ मैदानी भाग के हिस्से हैं। आलू के हाल के विस्तार पर गौर करने पर यह पता चलता है कि गैर परम्परागत क्षेत्रों जैसे गुजरात, मध्य प्रदेश तथा असम में भी उन्नत तकनीक के माध्यम से इस फसल की जगह बन रही है।

आलू के अधिक उत्पादन के फलस्वरूप बाजार में इसके दाम का गिरना और आलू उत्पादकों को भारी नुकसान तीन या चार साल के अन्तराल पर एक आवर्ती घटना हुआ करती थी। इस ग्लट/मंदी के फलस्वरूप अगले सालों में आलू के रकवे में भारी कमी आ जाती थी। इन समस्यओं से फसल के रकवे के सतत प्रगति में बाधा आती रही है। हाल के सालों में इस तरह के घटनाओं में सकारात्मक परिवर्तनध्सुधार दिखाई पड़ी है। इसके कई कारण हो सकते है। आलू के उपयोग में काफी वृद्धि हुई है तथा इसमें काफी विविधीकरण देखा गया है। आज आलू उत्पादन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा विधायन में इस्तेमाल होने लगा है। इसके साथ ही उन्नत क़िस्मों के विकास, उत्तम बीज की उपलब्धता, उन्नत फसल तकनीकए फसल सुरक्षा तकनीक में खास कर पिछेता झुलसा प्रबंधन से उत्पादकों को होने वाले नुकसान में काफी कमी इत्यादि प्रमुख कारण हो सकते हैं।

पूर्वी मैदानी क्षेत्र में आलू की स्थितः. पूर्वी मैदानी क्षेत्रए जिसमें मुख्यतः बिहार, पश्चिम बंगाल, झारखंड, ओडिसा, असम, छतीसगढ़ और पूर्वी उत्तर प्रदेश आता है भारत की भौगोलिक क्षेत्र का पॉचवां तथा आबादी का एक तिहाई हिस्सा होता है। इस क्षेत्र में आलू का क्षेत्रफल लगभग 10 लाख हेक्टेयर है जो कि यहां के कुल बुवाई क्षेत्र (314.3 लाख हेक्टेयर) का लगभग 3% ही है, जबकि यह देश के आलू के क्षेत्रफल का आधे से अधिक होता है। देश की तुलना में यहाँ जन घनत्व भी बहुत ज्यादा है (604 व्यक्ति प्रति वर्ग किलो मीटर, 382 व्यक्ति प्रति वर्ग किलो मीटर भारत) यहाँ जोत के माप भी काफी छोटे है (90% जोत < 1 हेक्टेयर)। योजना आयोग के अनुसार देश के कुल 150 आर्थिक रूप से पिछड़े ज़िलों में से 69 इस क्षेत्र में है। आर्थिक पिछड़ापन के कारण इस क्षेत्र में प्रौद्योगिकी का उत्पादकों द्वारा इस्तेमाल (adoption) की गति धीमी रही है। अर्थव्यवस्था की रीढ़ कृषि होने के बावजूद कृषि उत्पादकता का स्तर संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है।

सारणी 2: पूर्वी मैदानी क्षेत्र के विभिन्न राज्यों में आलू का क्षेत्रफल (000 हे.) तथा उत्पादन (000 टन)

क्र.सं.	राज्य	2011–12				2012–13			
		क्षेत्रफल	पूर्वी मैदानी क्षेत्र का %	उत्पादन	पूर्वी मैदानी क्षेत्र का %	क्षेत्रफल	पूर्वी मैदानी क्षेत्र का %	उत्पादन	पूर्वी मैदानी क्षेत्र का %
1	पश्चिम बंगाल	370	37	10700	49	377	38	9693	46
2	बिहार	315	32	6104	28	315	32	6308	30
3	असम	89	9	783	4	90	9	799	4
4	झारखंड	46	5	653	3	46	5	653	3
5	ओडिसा	14	1	198	1	14	1	201	1
6	पूर्वी उत्तर प्रदेश*	157	16	3294	15	157	16	3294	16
7	छतीसगढ	12	1	53	0.25	12	1	53.4	0.25
	पूर्वी मैदानी इलाकों	1009	100.0	21732	100.0	1011	100.0	21001	100.0
	भारत	1900		41480		1990		45340	

*वर्ष 2010–11 का हैय **वर्ष 2011–12

स्रोतः अर्थशास्त्र एवं सांख्यिकी निदेशालय, www.apy.dacnet.nic.in

भारत के पूर्वी क्षेत्र के महत्वपूर्ण राज्यों का मानचित्र
स्रोतः पूर्वी क्षेत्र के लिए भा.कृ.अनु.प. का अनुसंधान परिसर, पटना

इस क्षेत्र से भारत के आलू के कुल क्षेत्रफल तथा उत्पादन का आधा योगदान है (सारणी 2)। केवल दो राज्य पश्चिम बंगाल और बिहार इस क्षेत्र के लगभग दो तिहाई से ज्यादा क्षेत्रफल तथा तीन चौथाई से ज्यादा उत्पादन देते हैं जो कि देश के उत्पादन का 39% होता है। इस दृष्टि से देश में आलू के विकास के लिए यह क्षेत्र काफी महत्व रखता है। आलू की उत्पादकता में यह क्षेत्र देश की तुलना में कम है। क्षेत्र के विभिन्न राज्यों की तुलना की जाये तो पश्चिम बंगाल को छोड़ कर बाकी सभी राज्यों की उत्पादकता देश के औसत उत्पादकता से कम है।

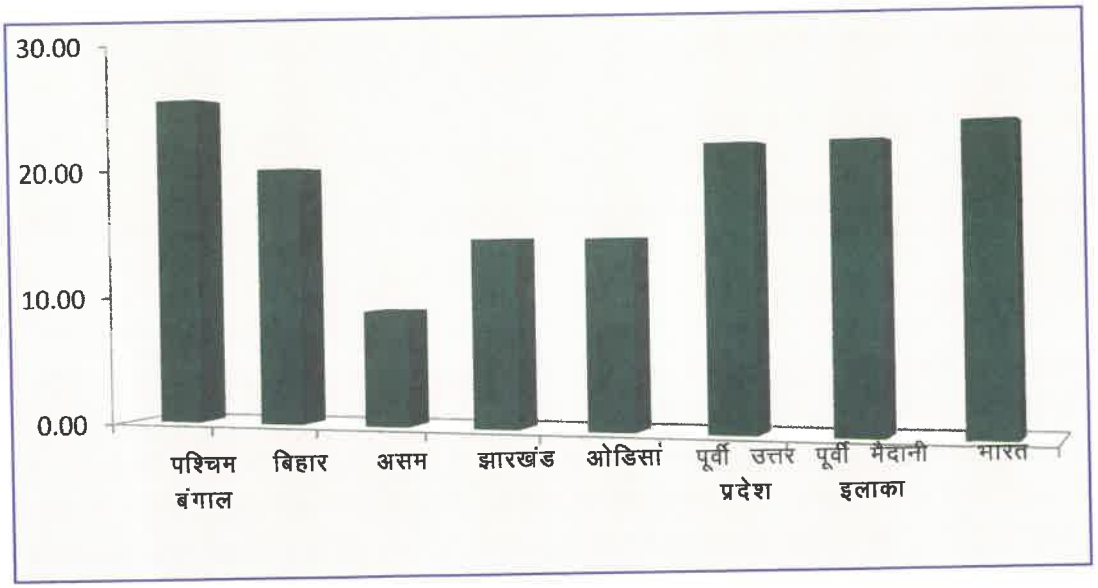

चित्र 4: पूर्वी मैदानी राज्यों में आलू की उत्पादकता (टन/हे.)

पिछले वर्षों में बिहार की उत्पादकता में काफी प्रगति हुई है फिर भी देश की औसत उत्पादकता तथा राज्य की क्षमता से काफी कम है। पर अन्य राज्य जैसे झारखंड, ओडिसा, असम तथा छतीसगढ में आलू विकास की संभावनाओं का साकार करना अभी बाकी है। ये राज्य इस क्षेत्र के आलू के क्षेत्रफल का 15% से ज्यादा लेते है। जबकि उत्पादन में इनका योगदान 8% से भी कम होता है।

पश्चिम बंगाल तथा बिहार की आलू उत्पादक ज़िलों की तुलना की जाये तो पश्चिम बंगाल के केवल 10 जिले जिसमें हुगली मिदनापुर, वर्दमान, जलपाई गुडी, बाकुड़ा, कुच विहार, वीरभूम शामिल है, पूर्वी क्षेत्र के एक तिहाई से ज्यादा उत्पादन देते हैं। परन्तु बिहार में आलू की खेती लगभग सभी ज़िलों में कम या ज्यादा होती है। राज्य के 12 जिले (सारणी 3) क्षेत्र के लगभग 13% क्षेत्रफल तथा उत्पादन देते हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश के मुख्य जिले बाराबंकी, जौनपुर, इलाहाबाद, बलिया, गाजिपुर, आजमगढ़ इत्यादि है। इसी प्रकार असम में दरांग, बारपेटा, कामरूप, सोनितपुर, झारखंड में हजारीबाग, लोहरदगा, सिंहभूम ओडिसा में कटक, केद्रपारा, जाजपुर तथा छतीसगढ़ में सरगुजा, जसपुर, रायगढ़ इत्यादि मुख्य आलू उत्पादक ज़िले हैं।

सारणी 3: पूर्वी मैदानी क्षेत्र के मुख्य आलू उत्पादक जिलें तथा उनका आलू के क्षेत्रफल तथा उत्पादन में योगदान

राज्यों के मुख्य आलू उत्पादक जिले	क्षेत्रफल (पूर्वी क्षेत्र का प्रतिशत)	उत्पादन (पूर्वी क्षेत्र का प्रतिशत)
पश्चिम बंगाल हुगलीए मिदनापु, (प.), वर्दमान, जलपाइगुडी, बांकुरा, कुच् विहार, वीरभूम, दिनाजपुर (उ.), मुरसीदाबाद. हावडा	33.70	42.60
बिहार नालंदा, पटना, सारण, वैशाली, गोपलगंज, समस्तीपुर, प. चंपारण, पूर्वी चंपारण, मुज्जफरपुर, रोहतास, गया, सीवान	13.31	12.96
पूर्वी उत्तर प्रदेश बाराबंकी, इलाहाबाद, हददोई, बलीया, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, गाजीपुर, आजमगढ़	9.97	8.73
असम दरांग, बारपेटा, कामरूप, सोनितपुर, नवगाव, घुबरी	4.95	2.37
झारखंड हजारीबाग, लोहरदगा, सिंहभूम (पू.), पलामू, गोडा, गढ़वा, राँची	2.46	1.74
ओडिसा कटक, केन्द्रपारा, जाजपुर, अंगुल, घेनकनल, जगतसिंगपुर, कानधामल	0.90	0.63
छतीसगढ़ सरगुजा, जासपुर. रायगढ़. कोरिया. विलासपुर	1.07	0.22

आलू उत्पादन का मौसम:. पूरे पूर्वी क्षेत्र में आलू की फसल मुख्यतः रबी के मौसम में उगाई जाती है। जिसे अक्तूबर के पिछले सप्ताह में लगाकर फरवरी महीने में खुदाई की जाती है। हॉलाकि, 10% से भी कम क्षेत्र में अगेती फसल शरद ऋतु सितंबर में लगाकर दिसंबर में खुदाई कर बाजार में बेच दिया जाता है। ऐसी फसल बिहार के कुछ जिलें जैसें नालंदा तथा सोन नदी के किनारे भोजपुर तथा औरंगाबाद जिलों में की जाती है। झारखंड तथा छतीसगढ़ के अधिक ऊंचाई वाले पठारी इलाकों में जैसे की हजारीबाग, रांची (झारखंड), मेनपाट (छतीसगढ़) मे खरीफ मौसम में भी आलू उगाई जाती है जिसे अक्टूबर में खोदकर बाजार में अच्छे दामों में बेचा जाता है।

प्रचलित किस्में: पूर्वी क्षेत्र के ज्यादातर हिस्सों में लाल छिलके वाले क़िस्मों की प्राथमिकता दी जाती है। हॉलाकि कुछ हिस्सों में सफेद छिलके वाले किस्म भी अपना स्थान बनाये हुये हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, उत्तर बंगाल के क्षेत्रों में जहॉ लाल किस्में ही महत्व रखती है जिसमें कुफरी सिंदूरी, कुफरी लालिमा तथा इससे संबंधित कुछ क्लोन बहुत ज्यादा प्रचलित है। इस क्षेत्र के बहुत बड़े हिस्से में स्थानीय स्तर पर प्रचलित किस्मों की खेती की जाती है, जो कि औपचारिक रूप से कही से जारी नहीं की गई है। झारखंड के कुछ हिस्सों में इन किस्मों के अलावा कुफरी कंचन तथा अलटिमस, भी काफी लोकप्रिय है, बंगाल के जिलों तथा दक्षिण बिहार में मुख्यतः नालंदा में सफेद छिलके वाले किस्में उगाई जाती है। बंगाल में जहां कुफरी ज्योति, कुफरी चंद्रमुखी किस्में ज्यादा प्रचलित है, बिहार में कुफरी पुखराज ने इन किस्मों को पीछे छोड़ दिया है। इसके अलावा इन क्षेत्रों में कुफरी अशोका तथा कुछ अन्य किस्में भी प्रचलित हैए असम के जिलों में कुफरी ज्योति, कुफरी बादशाह ज्यादातर जगहों पर उगाई जाती है। जबकि कुफरी मेघा तथा कुफरी गिरीराज देर से उगाई जाने वाली तथा अधिक बारिश वाले क्षेत्रों में उगाई जाने वाली किस्में है।

बीज के स्रोतः स्वस्थ और गुणवत्ता युक्त बीज का उपयोग आलू के लाभदायक फसल के लिए आवश्यक शर्त है। अच्छे बीज के स्रोत की कमी ही इस क्षेत्र की कम उत्पादकता का एक सबसे प्रमुख कारण है। इन राज्यों में सशक्त बीज श्रृंखला का नितान्त अभाव है। कुछ हद तक बंगाल को छोड़ कर ज्यादातर क्षेत्रों में बीज की प्राप्ति प्रमाणिक स्रोतों से नहीं हो पा रही है। जिसे इस क्षेत्र में सशक्त ढंग से सुलझाने की कोशिश नहीं की गई है। केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान द्वारा उपलब्ध प्रजनक बीज को आधार भूत बीज तथा परमाणीकृत बीज बनाने की प्रक्रिया काफी धीमी तथा कमजोर रही है। यही कारण है कि यहा इस्तेमाल हो रहे ज्यादातर किस्में राष्ट्रीय स्तर पर जारी की गई किस्मों से भिन्न है तथा किसानों द्वारा अपने ही खेत में उगाये गये आलू को बीज में इस्तेमाल किया जाता हैए जिसका न कोई प्रमाणीकरण किया गया है और न ही उसमें मौजूद बीमारियों की कोई जानकारी होती है। इन क्षेत्रों में विषाणु ग्रसित बीज का ही प्रयोग होता रहता है तथा पिछेता झुलसा जैसा खतरनाक बीमारियों की महामारी बार.बार झेलनी पड़ती है। ज्यादातर हिस्सों में बीज आलू पंजाब से या पश्चिम उत्तर प्रदेश से लाया जाता है। कुछ हिस्सों में बीज का अपवहन पश्चिम बंगाल या बिहार के कुछ क्षेत्रों से अन्य पूर्वी राज्यों में भी होता है।

फसल प्रणालीः आलू कम अवधि तथा लचीले फसल अंतराल होने के कारण कई ढंग के फसल चक्र और अन्तः फसल में इस्तेमाल में लाया जाता है। इसमें से कुछ जैसे कि चावल–आलू सबसे ज्यादा क्षेत्रों में होता है। कई जगहों पर आलू तथा सब्जियों आधारित काफी सघन फसल चक्र भी अपनाये जाते हैं। इस क्षेत्र के मुख्य फसल चक्र है।

चवल–आलू, चावल–आलू–प्याज, आलू–आलू–प्याज, चावल–आलू–मुँग, चावल–आलू–जूट, चावल–आलू–तिल, चावल–आलू–मूँगफली, मक्का–आलू–सब्जी, मक्का–आलू–मुँग, ओल (जिमीकन्द)–आलू इत्यादि।

बीमारियाँ एवं कीटः पिछेता झुलसा क्षेत्र की सबसे मुख्य बीमारी है जो कि हर साल किसी न किसी क्षेत्र में फसल की क्षति करती है तथा खराब बीज वाले फसल में यह समस्या और भी प्रबल दिखाई देती है। पिछेता झुलसा के अलावा साधारण खुरण्ड भी एक प्रमुख रोग है जिसके कारण उत्पादित आलू कंद बीज के लायक नहीं रह पाते हैं। इसके अलावा कहीं.कहीं जीवाणु मुरझान (खासकर झारखंड और पश्चिम बंगाल में), काली रूसी या अगेता झुलसा फसल का नुकसान पहुँचाते हैं। इस क्षेत्र में विषाणु वाहक कीटों की अत्यधिक संख्या होने के कारण तथा विषाणु के गुणन के लिए उपयुक्त स्थिति (तापमान और आर्द्रता) होने से विषाणु के लक्षण जल्द ही परिलक्षित होता है तथा बीज की गुणवत्ता का अघः पतन कर देते है यही कारण है कि इस क्षेत्र में ज्यादातर हिस्सा प्रजनक व बीज के उत्पादन के लिए उपयुक्त नहीं होता है।

विधायन की संभावनाएँ: विधायन हेतु आलू उपजाने के लिए के पूर्वी क्षेत्र भारत के सबसे उपयुक्त क्षेत्रों में से आता है। फसल बढ़वार तथा पकने के दौरान पश्चिमी राज्यों के मुकाबले औसत न्यूनतम तथा अधिकतम तापमान ज्यादा होने से यहां उगाई गई आलू में शुष्क पदार्थ की मात्रा ज्यादा तथा अवकारी शर्करा की मात्रा कम देखी जाती है। आलू पकने के दौरान पटना का औसत न्यूनतम तथा अधिकतम तापमान 13 तथा 26 डिग्री सेण क्रमशः होता है। यह देखा गया है कि फसल पकने के दौरान न्यूनतम तापमान 12 डिग्री से. से ज्यादा होने पर कुफरी ज्योति तथा विधायन उपयोगी क़िस्मों में शुष्क पदार्थ की मात्रा 20% से ज्यादा के साथ–साथ अवकारी शर्करा की मात्रा भी स्वीकार्य सीमा में पाई जाती है। यही कारण है कि यहां के उत्पादित आलू विधायन के लिए सबसे उपयुक्त होती है। क्षेत्र के आलू उत्पादक किसानों तथा अन्य छोटे व्यवसायी के फायदे के लिए क्षेत्र के इस क्षमते की दोहन की आवश्यकता है।

पूर्वी क्षेत्र के लिए आलू उत्पादन के लक्ष्य (भविष्य की परिकल्पना): केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान के विजन दस्तावेज के परिकल्पना के अनुसार 2030 तथा 2050 में आलू उत्पादन, क्षेत्रफल तथा उत्पादकता 670, 1225 लाख टन, 25.5, 36.2 लाख हेक्टेयर तथा 27.21, 34.5 टन प्रति हेक्टेयर, क्रमशः होनी चाहिए। पूर्वी क्षेत्र के राज्यों की इस लक्ष्यों को पूरा करने में अहम भूमिका निभानी है। वास्तव में पूर्वी क्षेत्र का अंशदान राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ना चाहिए क्योंकि इस क्षेत्र के उत्पादन क्षमता का समुचित दोहन अभी तक नहीं हुआ है तथा काफी संभावनाएं अभी भी बरकरार हैं। इसी तरह से इस क्षेत्र के वर्तमान क्षेत्रफल तथा उत्पादन को 10 लाख हेक्टेयर से 13.5 तथा 19.2 लाख हेक्टेयर, 210 लाख टन से 354 तथा 655 लाख टन क्रमशः वर्ष 2030 तथा 2050 में पहुंचाने की आवश्यकता होगी। साथ ही अभी की उत्पादकता स्तर 19.1 टन प्रति हेक्टेयर को 27 तथा 34 टन प्रति हेक्टेयर पहुंचना होगा। इस वृद्धि को पाने के लिए एक समन्वित प्रयास की आवश्यकता है।

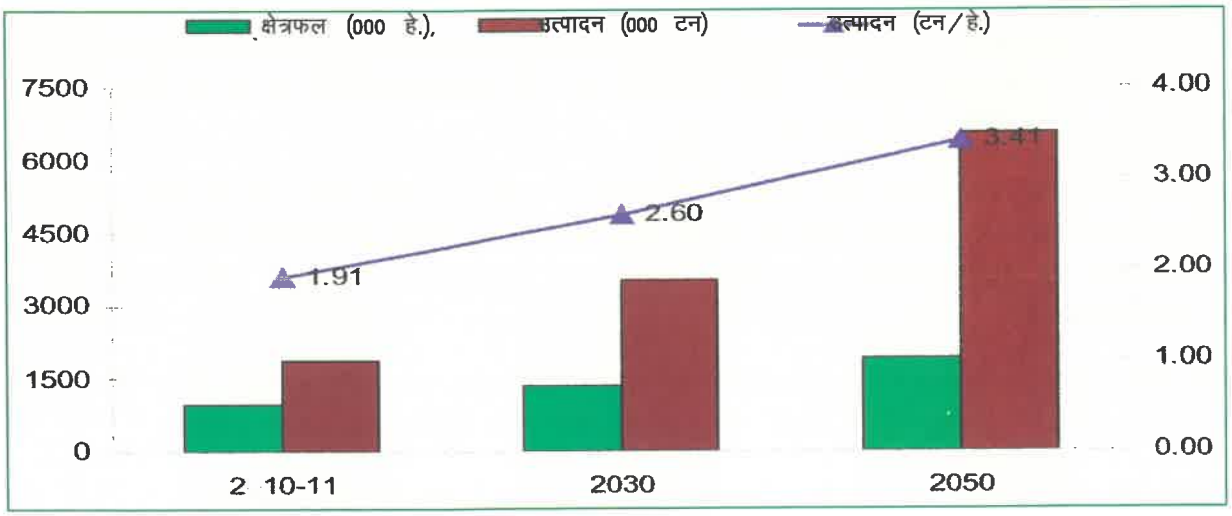

चित्र 5: पूर्वी क्षेत्र में आलू की क्षेत्रफल, उत्पादन तथा उत्पादकता के परिकल्पित लक्ष्य

इस क्षेत्र में आलू के विकास तथा विस्तार के लिए तथा परिकल्पित लक्ष्य को समयबद्ध तरिकों से हासिल करने के लिए बहुआयामी प्रयास की आवश्यकता है। इसके लिए कुछ बिन्दु वर्णित किये जा रहे है।

उन्नत तथा उपयुक्त किस्मों विकासय लाल छिलके वाली, कम समय में पकने वाली क़िस्मों के विकास की इस क्षेत्र में प्राथमिकता मिलनी चाहिए। इसके अलावा इस क्षेत्र में झुलसा रोग प्रतिरोधी क़िस्में तथा जिन क़िस्मों

में विषाणु रोग के कारण अधः पतन (degeneration) कम होता हो काफी उपयोगी हो सकती है। पूर्वी क्षेत्र के कुछ हिस्सों में कम समय वाली प्रसंस्करणीय क़िस्मों की भी आवश्यकता होगी।

उत्तम बीज की उपलब्धता बढ़ानाः उन्नत क़िस्मों को उत्तम बीज का इस क्षेत्र में नितांत अभाव है। इसके लिए निजी तथा सरकारी संकाय संस्थानों को एक साथ मिलकर कार्य करने की आवश्यकता है। उपलब्ध प्रजनक बीजों का सही ढंग से गुणन जिसमें सीड प्लाट तकनीकी का उपयोग करते हुये आधारभूत–1; आधारभूत–2 तथा प्रमाणित बीजों का उत्पादन सुनिश्चित करना होगा। इसके साथ ही आधुनिक तकनीक जैसे कि उत्तक प्रबंधन, एरोपोनिक्स का निजी इस्तेमाल कर बीज की गुणवत्ता तथा अधिक मात्रा सुनिश्चित करनी होगी। इसके अलावा बीज उत्पादकों, बीज ग्राम इत्यादि अवधारणा को बढ़ावा देना होगा। इसके अलावा सुदूर क्षेत्रों में और जहॉ शीतगृहों की संख्या कम है वैकल्पिक बीज व्यवस्था जैसे कि मूल बीज से खेती इत्यादि को बढ़ावा देना होगा।

कृषि संबन्धित इनपुट तथा तकनीकी उपलब्धता सुनिश्चित करनाः बीज के अलावा अन्य कृषि आदान जैसे अच्छे खाद, कृषि रसायन इत्यादि की सही समय पर उपलब्धता आलू की सही उत्पादन के लिए बेहद महत्वपूर्ण है। इसके साथ ही आलू की उन्नत उत्पादन के लिए सही तकनीकों का उत्पादकों के बीच प्रसार ताकि वे इसका सही ढंग से तथा सही समय पर इस्तेमाल कर सके कृषि उत्पादन के वृद्धि के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

प्रसंस्करणः इस क्षेत्र में आलू के प्रसंस्करण को बढ़ावा देने की आवश्यकता है जिसके लिए उचित माहौल बनाना होगा ताकि आलू की उपयोग में विविधकरण लाया जा सकें। छोटे एवं कुटीर उद्योगों को भी बढ़ावा देना होगा जिसकी स्थानीय स्तर पर उपलब्ध अतिरिक्त कंदों का उपयोग कर मंदी से उभरा जा सके। प्रसंस्करण उद्योग को भी बढ़ावा देने के लिए उचित माहौल बनाने की आवश्यकता है।

आधुनिक भंडारण का विकासः पूरे पूर्वी क्षेत्रों में उपलब्ध भंडारण क्षमता यहाँ के उत्पादन से आधे से भी कम है। जिसके कारण जनवरी से मार्च तक के महीने में जबकि ज्यादातर भागों में आलू की खुदाई होती है, भंडारण के कमी के कारण बाजार में इनके दर में काफी गिरावट आती है और किसानों और उत्पादकों को नुकसान होने लगता है। अतः शीतगृहों की क्षमता वृद्धि के अलावा उत्पादकों के खेत खलिहान पर ही कुछ समय तक भंडारण के लिए उन्नत तकनीक उपयोग लाने की आवश्यकता है। शीतगृहों के आधुनिकी करण जिससे की बीज आलू तथा भोज्य व प्रसंस्करण उपयोगी आलुओं का समुचित ढंग से तथा अलग.अलग भंडारण किया जा सके की अत्यन्त आवश्यकता है।

सारणी 4: पूर्वी क्षेत्र के विभिन्न राज्यों में शीतगृहों की संख्या व क्षमता

राज्य	कुल संख्या	क्षमता (000 टन)
बिहार	237	965
झारखंड	25	81
असम	30	87
ओडिसा	104	274
पश्चिम बंगाल	390	4082

स्रोतः agmarknet.nic.in

निष्कर्ष

भारत के पूर्वी मैदानी क्षेत्र, जहां जनसंख्या घनत्व ज्यादा है, लोगों के खाद्य एवं पोषण सुरक्षा में अधिक उत्पादकता एवं गुणवत्ता वाली फसल आलू का विशेष महत्व है। पूरे देश के कुल आलू उत्पादन का आधा भाग पूर्वी क्षेत्र के राज्यों से आने के कारण तथा इस क्षेत्र की पूर्ण क्षमताओं के दोहन के लिए अगले दशकों मे इस क्षेत्र का भारत के आलू मानचित्र पर विशेष स्थान होगा। इसके लिए एक समन्वित प्रयास जिसमें तकनीकी विकास (उन्नत किस्म, बीज की उपलब्धता, पादप संरक्षण, उत्पादन तकनीक) के साथ साथ कृषि विस्तार, आधार भूत संरचनाओं का विकास तथा प्रसंस्करण उद्योगों को बढावा देना होगा। परिकल्पित उत्पादन लक्ष्यों को पूरा करने के लिए सरकारी तंत्र के साथ साथ निजी संगठनों एवं प्रगतिशील किसानों की भागीदारी सुनिश्चित करनी होगी।

पूर्वी क्षेत्र में दूसरी हरित क्रांति की प्रमुख चुनौतियां

बी.पी. भट्ट[1] एवं उज्ज्वल कुमार[2]

[1]निदेशक, [2]प्रधान वैज्ञानिक, पूर्वी क्षेत्र के लिए भा.कृ.अनु.प. का अनुसंधन परिसर, पटना, बिहार

भारत के पूर्वी क्षेत्र में असम, बिहार, छत्तीसगढ़, पूर्वी उत्तर प्रदेश, झारखंड, ओडिशा और पश्चिम बंगाल राज्य आते हैं जिसमे भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 21.85 प्रतिशत इस क्षेत्र में शामिल है। इसमें देश के 34 प्रतिशत मानव और 31 प्रतिशत पशुधन आबादी वास करते हैं। पूर्वी राज्यों में अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि है, जिसका कुल भौगोलिक क्षेत्र 718.40 लाख हेक्टेयर है जिसमें शुद्ध बुवाई क्षेत्र 291.30 लाख हेक्टेयर है और इस क्षेत्र की फसल सघनता 150 प्रतिशत है (सारणी–1)। उच्च जनसंख्या घनत्व (राष्ट्रीय स्तर 325 व्यक्ति/कि.मी^{2} की तुलना में 619 व्यक्ति/कि.मी^{2}) है (सारणी–2)। कृषि क्षेत्र में बिजली की खराब आपूर्ति, प्रति व्यक्ति सबसे कम आय (राष्ट्रीय औसत की तुलना में प्रतिवर्ष 60,972/रु के जगह करीब 38,328/रु है) और आर्थिक रूप से सबसे पिछड़े जिलों की अधिकतम संख्या (राष्ट्रीय स्तर पर 150 में से 69) के कारण इस क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों पर भारी दबाव पड़ता है। इसके अलावा स्थान–विशिष्ट उत्पादन प्रौद्योगिकियों, बाढ़, जल जमाव, सूखा और सामाजिक बाधाओं जैसी प्राकृतिक आपदाओं के कारण कृषि, पशुधन और मत्स्य पालन का उत्पादन भी प्रभावित होता है।

इस क्षेत्र में घनी आबादी के कारण भूमि पर दबाव के अलावा भूमि क्षरण, पानी और पोषक तत्वों का असंतुलित उपयोग, कम उर्वरक की खपत, कम उत्पादकता, मशीनीकरण के निम्न स्तर, जलवायु परिवर्तन के प्रभाव, गैर लाभकारी मूल्य भी प्रमुख चुनैतियां हैं।यह क्षेत्र समुद्र के खारा पानी और आंधी से भी प्रभावित है। क्षेत्र में 40.5 लाख हेक्टेयर दलदल भूमि हैं (सारणी–3), जिसका कृषि उत्पादकता हेतु निराकरण जरूरी है। इस क्षेत्र में राष्ट्रीय स्तर (3600 लाख) की तुलना में करीब 1630 लाख लोग अत्यधिक गरीब हैं, जिनके जीवन स्तर को सुधारने की जरूरत है। इस क्षेत्र मे जल उत्पादकता बहुत कम है (0.37 किलो/मी.^{3})। यद्यपि इस क्षेत्र में दुधारू पशुधन की आबादी 1650 लाख है लेकिन संकर नस्ल पशुओं की संख्या 5 प्रतिशत से भी कम है। इस क्षेत्र में गुणवत्तायुक्त चारे एवं पशु आहार की कमी है और पशु स्वास्थ्य की देख–रेख की व्यवस्था भी निम्न स्तर पर है।

क्षेत्र मे करीब 110 लाख हेक्टेयर धान–परती (राईस फैलो) भूमि है, 75 लाख हेक्टेयर अम्लीय भूमि, 38.1 लाख हेक्टेयर क्षारीय भूमि के कारण भी उत्पादकता प्रभावित होती है। पहाड़ी एवं पठारी भूमि में एक फसली कृषि प्रणाली के कारण भी फसल सघनता कम है। 61.6 लाख हेक्टेयर बंजर भूमि को कृषिवानिकी एवं बागवानी द्वारा सुधार की जरूरत है। झारखंड, उड़िसा एवं छत्तीसगढ़ के कोयले के खदानों को कृषि उपयोग में लाने की जरूरत है। अतः इस क्षेत्र में कृषि क्षेत्र में निम्न चुनौतियां है;

- टिकाऊ खेती
- खाद्य एवं पोषण सुरक्षा

- जलवायु परिवर्तन एवं फसल उत्पादकता में इसका प्रभाव
- तकनीकी विकास एवं हस्थानांतरण
- जल उत्पादकता एवं संसाधन दक्षता में बढ़ोतरी
- कृषि हेतु प्रोत्साहन
- कृषि निवेश में बढ़ावा
- संस्थागत मूलभूत संरचनाओं का सुदृढ़ीकरण
- कृषि व्यवसायिकरण
- उपनगरी क्षेत्रों में कृषि
- पूर्वी क्षेत्रों के संसाधनों का प्रबंधन एवं उचित दोहन

उपरोक्त चुनौतियों से निपटने हेतु देश के पूर्वी क्षेत्र में भूमि, जल, फसलों, बायोमास, बागवानी, पशुधन, मत्स्य और मानव संसाधनों का समग्र प्रबंधन के द्वारा कृषि उत्पादकता में बढ़ोतरी लाई जा सकती है। इसके लिए तकनीकियों का उचित समावेश, मांग आधारित कृषि घटकों को बढ़ावा देना, कृषि शोध को नेटवर्क के रूप में विभिन्न शोध संस्थानों द्वारा प्रयास करना एवं प्राकृतिक संसाधनों का वैज्ञानिक प्रबंधन की जरूरत है। कुछ प्रमुख चुनौतियों को निम्न रूप से सुलझाया जा सकता है।

धान-परती भूमि प्रबंधन

धान–परती भूमि प्रबंधन विशेष कर, पूर्वी हिमालय एवं पहाड़ी एवं पठारी क्षेत्र में प्रमुख चुनौती है। कुछ धान–परती भूमि को दलहनी एवं तेलहनी फसल द्वारा उपयोग में लाया जा सकता है जिसमें जल की आवश्यकता कम होती है एवं अपशिष्ट नमी का उपयोग किया जा सकता है। कृषिवानिकी, गहरे जड़ वाले चारा फसल, फसल विविधिकरण एवं समेकित कृषि प्रणाली द्वारा धान परती भूमि का प्रबंधन संभव है।

प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन

समेकित मृदा उर्वरता प्रबंधन (इंटिग्रेटेड स्वायल फर्टिलिटि मैनेजमेंट) द्वारा मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाई जा सकती है एवं उसकी उर्वरता स्थिर रखी जा सकती है। सुक्ष्म तत्वों, विशेषकर जिंक, लौह्, बोरोन, मैग्नीज, तांबा, सल्फर इत्यादि की कमी को भी ध्यान देने की जरूरत है। इसके लिए धान–गेहूं फसल प्रणाली में संरक्षित खेती को सुदृढ़ करने की जरूरत है। चूंकि इस क्षेत्र में बंजर भूमि की अधिकता है इसे कृषि वानिकी एवं बागवानी द्वारा उपयोग में लाया जा सकता है और मिट्टी उर्वरता को भी कायम रखते हुए जीविकोपार्जन में बढ़ोतरी की जा सकती है।

पूर्वी क्षेत्र में औसतन 1526 मि.मि. (151 से 2477 मि.मि.) वर्षापात है लेकिन इसका वितरण असमान्य है। औसतन इस क्षेत्र में देश का 18 प्रतिशत उपयोगी जल संसाधन उपलब्ध है। क्षेत्र में सिंचाई क्षमता 336.5 लाख हेक्टेयर मीटर है, लेकिन केवल इसका 65 प्रतिशत ही सिंचाई हेतु उपयोग में लाया जा सका है। भू–गर्भीय जल का उपयोग भी पूर्वी क्षेत्र में कम है जिसका मुख्य कारण बिजली की कमी होना है। जल के बहुउद्धेशीय उपयोग जल छाजन/संचयन, ऑन फार्म जल प्रबंधन एवं वर्षा, भूगर्भी एवं सतही जल का समेकित उपयोग द्वारा जल संसाधन का समुचित दोहन संभव है।

जैव विविधता संरक्षण

द्वितीय हरित क्रांति हेतु फसल की अधिक उपजाऊ किस्मों का उपयोग इस क्षेत्र की जैव विविधता को प्रभावित कर सकती है। क्षेत्र के प्रमुख कृषि, बागवानी फसलों एवं बहुउद्देशीय वृक्ष के जर्मप्लाज्म के संरक्षण द्वारा विशेषकर, संभावित जलवायु परिवर्तन प्रदृश्यों में टिकाऊ विकास संभव है। टिकाऊ खाद्यान्न उत्पादन हेतु क्षेत्र में दलहन, तेलहन, कंद मूल फसल, जंगली खाद्य पदार्थ सहित परंपरागत खाद्यान्न फसलों को संरक्षित करने की जरूरत है।

भूमिहीनों के जविकोपार्जन में सुधार

यद्यपि पूर्वी क्षेत्र में देश का मात्र 21.85 प्रतिशत क्षेत्रफल है लेकिन देश के 150 में से 69 जिले पूर्वी क्षेत्र में पिछड़े पाए गए हैं। इस क्षेत्र के भूमिहीन कृशकों की जीविका में सुधार एक प्रमुख चुनौति है जहां देश के 45 प्रतिशत लोग विशेषाधिकार से वंचित है। इस क्षेत्र में भूमिहीन के लिए जीविकोपार्जन में सुधार हेतु उचित विकल्पों का चयन एवं उसको प्रभावी रूप से लागू करने की जरूरत है। इसके लिए कुछ घटक जैसे; मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, बकरी पालन इत्यादि घटकों को संस्थागत रूप से शामिल करने की जरूरत है।

खेती से जुड़े नये अवसर जैसे सिस्टम–मोड उत्पादन, समेकित कृषि प्रणाली, समेकित मत्स्य पालन प्रणाली, जल का समेकित उपयोग, दलदली भूमि का संरक्षण, संरक्षित खेती, सौर ऊर्जा, कृषि–वानिकी, पशुधन आधारित कृषि प्रणाली इत्यादि द्वारा क्षेत्र में कृषि उत्पादकता में बढ़ोतरी की जा सकती है एवं वंचित एवं गरीब कृषकों की जीविकोपार्जन में सुधार लाया जा सकता है।

पूर्वी क्षेत्र में सिस्टम प्रणाली द्वारा उत्पादकता में सुधार की असीम संभावनाएं है जिसमें फसल–पशुधन–मत्स्य–कृषिवानिकी–बागवानी के तालमेल द्वारा जल एवं भूमि उत्पादकता में बढ़ोतरी संभव है। इसमें कृषि अपशिष्टों के पूर्ण उपयोग द्वारा टिकाऊ उत्पादन संभव है। अतः शोध की रणनीति उत्पादकता में वृद्धि, विविधिकरण, जोखिम प्रबंधन, प्रसंस्करण, मूल्य संर्वधन एवं मार्केट इंटेलिजेंस द्वारा उत्पादकता में न्यूनतम क्षय की होनी चाहिए।

सारणी 1: पूर्वी क्षेत्र का भौगोलिक क्षेत्रफल, शुद्ध बुवाई क्षेत्र (लाख हे.) एवं फसल सघनता

राज्य	भौगोलिक क्षेत्रफल	शुद्ध बुवाई क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	फसल सघनता (%)
असम	78.4	28.1	1.6	148.0
बिहार	94.2	52.6	30.3	136.8
छत्तीसगढ	135.2	47.0	13.6	120.8
पूर्वी उत्तर प्रदेश	86.4	56.0	43.0	154.68
झारखंड	79.7	10.9	1.3	115.1
उड़ीसा	155.7	46.8	12.8	116.0
पश्चिम बंगाल	88.8	49.9	29.6	191.6
पूर्वी क्षेत्र (प्रतिशत हिस्सेदारी भारत की तुलना में)	718.4 (21.85)	291.3 (20.57)	132.1 (20.77)	150.5
भारत	3287.3	1415.8	636.0	140.5

स्रोतः 1. भू–उपयोग सांख्यिकी– एक नजर 2001–02 से 2010–11 (अप्रैल 2013), 2. सांख्यिकीय सारांश, उत्तर प्रदेश (2011)

सारणी 2: पूर्वी क्षेत्र की कुल जनसंख्या (लाख)

राज्य	कुल जनसंख्या	जनसंख्या घनत्व (प्रति कि.मी.^{2})	ग्रामीण जनसंख्या (प्रतिशत)	बीपीएल (प्रतिशत)
असम	312.1	398	87.28	37.90
बिहार	1041.0	1106	89.53	53.50
छत्तीसगढ़	255.5	189	79.92	48.70
पूर्वी उत्तर प्रदेश	798.9	931	79.22	37.70
झारखंड	329.9	414	77.75	39.10
उड़ीसा	419.7	270	85.03	37.00
पश्चिम बंगाल	912.8	1028	81.91	26.70
पूर्वी क्षेत्र (औसत/कुल)	**4069.8 (33.62%)**	619.42	**82.95**	**40.08**
भारत	12105.7	325	72.18	29.80

स्रोतः जनगणना, (2011); जिलावार विकास सूचक उत्तर प्रदेश (2011)

सारणी 3: पूर्वी क्षेत्र में दलदल भूमि की स्थिति

राज्य	भौगोलिक क्षेत्रफल (लाख हे०)	दलदल क्षेत्रफल (लाख हे०)	दलदल क्षेत्र (प्रतिशत)
असम	78.4	7.52	9.74
बिहार	91.7	4.03	4.40
छत्तीसगढ	135.2	3.38	2.50
पूर्वी उत्तर प्रदेश	85.9	5.86	6.82
झारखंड	79.7	1.70	2.13
उड़ीसा	153.9	6.91	4.49
पश्चिम बंगाल	88.8	11.08	12.48
पूर्वी क्षेत्र	713.5	40.48	5.69
भारत	3297.5	152.26	4.63

स्रोतः नेशनल वेटलैंड एटलस एवं स्पेस एपलिकेसन सेंटर, अहमदाबाद (2011)

भारत के कृषि विकास में कृषि विज्ञान केन्द्र की भूमिका

श्याम रंजन कुमार सिंह[1], अनुपम मिश्र[2] एवं ए.पी. द्विवेदी[3]

[1&3]वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं [2]जोनल परियोजना निदेशक, क्षेत्रीय परियोजना निदेशालय जोन–7 जबलपुर

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है। कृषि के विकास की दर से आम जनता की खुशहाली और उन्नति जुडी हुई। इसी कृषि विकास की दर को निरंतर बढ़ाये रखने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद नई दिल्ली द्वारा सन् 1974 में कृषि विज्ञान केन्द्र की शुरुआत की गई थी। जो कि आज के समय में बेहतर प्रसार ढाँचे (मॉडल) के रुप में कार्य कर रहा है। कृषि विज्ञान केन्द्र की सार्थकता को इस बात से आँका जा सकता है कि एफ॰ए॰ओ॰ के प्रतिनिधि ने इसे इक्कीसवीं सदी की सबसे बड़ी संस्थागत नवाचार के रुप में माना है।

कृषि विज्ञान केन्द्र जिला स्तर पर कार्य करने वाली एक वैज्ञानिक संस्थान है जो कि किसानों के बीच रहकर उनकी खेती की दशा और दिशा सुधारने में तत्पर हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा कृषि विज्ञान केन्द्र के मुख्य उद्देश्य (डंदकंजम) इस प्रकार निर्धारित किये गये।

"प्रौद्योगिकी/तकनीकों का मूल्यांकन व सुधार एवं प्रदर्शन"

इसके अन्तर्गत विभिन्न क्रिया–कलापों को निर्धारित किया गया है जो निम्न प्रकार हैः

1. कृषकों के प्रक्षेत्र पर स्थानीय जलवायु के अनुकूल पर तकनीक मूल्यांकन व सुधार।
2. नई विकसित तकनीक की क्षमता को अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन द्वारा कृषकों को दर्शाना।
3. कृषकों, कृषिरत महिलाओं ग्रमीण नवयुवकों के ज्ञान एवं दक्षता को बढ़ाने हेतु प्रशिक्षण आयोजित करना।
4. जिला स्तर पर कृषि ज्ञान एवं संसाधन केन्द्र के रुप में कार्य करना।
5. फ्रंटियर टेक्नॉलाजी के बारे में विस्तृत जागरुकता बढ़ाना।
6. गुणक्त्तापूर्ण बीज एवं पौधों को तैयार करके किसानों को उपलब्ध कराना।

विशेष पहलू इसे संस्था के साथ यह है कि यह अपनी गतिविधियों कृषक परिवारों की सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियाँ, स्थानीय जलवायु एवं बाजार–आधारित तथ्यों को समावेश करते हुए किसानों एवं कृषि महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करके करता है, जिससे इसके अनुग्रहण में बहुत कठिनाईयों का सामना न करना पड़े। कृषि विज्ञान केन्द्र, भारत की नहीं वरन् विश्व में कृषि विकास के लिए संचालिक एक मात्र व्यवस्था है जिसके अन्तर्गत ज्ञानी एवं अनुभवी वैज्ञानिक–दल किसानों के इतने करीब उपलब्ध है।

इन केन्द्र द्वारा सहभागिता ग्रामीण मूल्यांकन (पी॰आर॰ए॰) तकनीक द्वारा किसी कार्य को ग्रामीण क्षेत्रों में संचालित करने से पहले उस क्षेत्र के संबंध में आँकड़े इकटठे करके वहाँ की कृषि संबंधी समस्याओं का निर्धारण

किया जाता है जिसके बाद उसका समाधान उपलब्ध तकनीकों से ढूढकर किसानों की आमदनी बढ़ाने का प्रयास किया जाता है। कृषि विज्ञान केन्द्र में मूलतः 16 सदस्य होते हैं जिसका प्रधान–कार्यक्रम समन्वयक होता है, 6 वैज्ञानिकों का दल होता है जो कि विभिन्न विषयों के विषय–वस्तु–विशेषज्ञ कहलाते हैं, इसके अलावा 3 कार्यक्रम सहायक, एवं अन्य सहायक कर्मचारी होते हैं। प्रत्येक कृषि विज्ञान केन्द्र के पास 20 हेक्टेयर (यानी 50 एकड़) का फार्म होता है जिसका उपयोग केन्द्र तकनीकों का प्रदर्शन, फसल कैफेटेरिया, डेयरी फार्म, बीज उत्पादन, एवं अन्य प्रर्दशन इकाईयों के रुप में करता है। इस फार्म पर विभिन्न तकनीकों की प्रदर्शन के नतीजो से भ्रमण पर आये किसानों एवं विशिष्ट आगन्तुकों को अवगत कराया जाता है। जिससे प्रभावित होकर इन तकनीकों का अनुग्रहण उस क्षेत्र विशेष में बढ़ जाता है।

परिषद् द्वारा किसानों के हित में प्रत्येक केन्द्र पर किसान होस्टल बनाया गया है जिस पर किसान रहकर छोटी एवं लंबी अवधि का प्रशिक्षण प्राप्त कर अपनी खेती को और सुदृढ़ बना सके।

कृषि विज्ञान केन्द्र के मुख्य क्रिया-कलाप

प्रक्षेत्र परीक्षण द्वारा तकनीकी मूल्यांकन एवं सुधार

केन्द्र पर कार्यरत वैज्ञानिक दल द्वारा क्षेत्र का गहन सर्वे किया जाता है और उस सर्वे के बाद क्षेत्र में उपस्थित कृषि संबंधी समस्योओं का आकलन करके उपयुक्त तकनीकों का चुनाव करके इसका मूल्यांकन एवं सुधार कार्य किया जाता है जिससे की क्षेत्र में किसानों को सही एवं अनुकूल तकनीक उपलब्ध कराया जा सकें। निम्न लिखित चित्रो में क्रमशः धान के फसल मे ट्राइकोकार्डए धान एवं मछली पालनए प्याज की फसलए भिन्डी की फसलए ब्रोकोली एवं पपीता पर प्रक्षेत्र परीक्षण किया गया है।

तकनीक प्रदर्शन

कृषि विज्ञान केन्द्र द्वारा परीक्षण में पाये गये परिणामों के आधार पर प्रक्षेत्र प्रदर्शन एवं अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन लगाये जाते हैं। जिससे अच्छे तकनीकों को किसानों के प्रक्षेत्र पर दिखाकर उन्हें इसको अपनाने के लिए प्रेरित कर सके ओर सहमत कर सकें। इससे अच्छी पैदावार वाली उन्नत किस्में, सही उत्पादन तकनीकों, कृषि यंत्रों एवं सुरक्षा रसायनों, जैविक खादों को किसानों द्वारा अपनाने में काफी मदद मिलती है। तकनीकों के प्रदर्शन देखकर कृषक बंधु जल्दी निर्णय लेने में सक्षम होते है जो कि अन्यथा संदेहों से घिरे रहते हैं। निम्नलिखित चित्रों में क्रमशः लहसुन ग्रीष्मकालीन मूगफली एवं धान मे अग्रीम पंक्ति प्रदर्शन दर्शाया गया है।

केन्द्र द्वारा किसानों की उत्पादकता एवं आमदनी बढाने हेतु संरक्षित खेती के प्रति जागरूक एवं सम्पूर्ण जानकारी प्रदान करने का सतत प्रयास किया जाता है, ताकि बेमौसमी सब्जियों एवं फूलों की खेती नियंत्रित वातावरण में करके प्रति इकाई क्षेत्रफल व कम समय में अधिक से अधिक उत्पादन लेकर संसाधनों का भरपूर दोहन के साथ ही आर्थिक मजबूती प्राप्त करने मे सफल हो सकें। श्संरक्षित खेतीष् से आशय नियंत्रित वातावरण जैसे तापक्रम, आर्द्रता, प्रकाश का सूचारू प्रबंधन सुनिश्चित करते हुए प्रत्येक मौसम में सफलता पूर्वक खेती सम्पन्न करना, ताकि कृषक आसानी पूर्वक असामयिक सब्जी, फूल एवं नर्सरी की खेती को शामिल कर अधिकाधिक लाभ प्राप्त कर सके। इसके अन्तगर्त ग्रीन हाउस, ग्लास हाउस, पॉली हाउस के माध्यम से संरंक्षित खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। पॉली हाउस मे तापमान अधिक होने से मृदा कार्बन का विश्लेषण अपेक्षाकृत अधिक होता है तथा पोषक तत्वो की उपलब्धता भी बढ़ जाती है जिस कारण फसल की वानस्पतिक वृद्धि अपेक्षाकृत अधिक होती है।

पाली हाउस तथा नेट हाउस के अन्तर्गत सब्जियों, फूलों एवं नर्सरी की संरक्षित कृषि प्रणाली के मानकीकरण द्वारा बीमारी मुक्त पौध और बेमौसमी सब्जियों की खेती का सफल प्रदर्शन किया गया है जिससे कृषकों को अत्यधिक लाभ प्राप्त हुआ। यह तकनीक किसानों के लिए एक हितकर तकनीक है जिसे सीमांत एवं लघु कृषक आसानी पूर्वक अपना कर अपनी आमदनी में आशातीत वृद्वि कर सकते हैं और जीवन स्तर में भी बदलाव ला सकते हैं अतः जिले के किसानों से अपेक्षा है कि अपनी परिस्थितियों को ध्यान में रखकर इस तकनीक का भरपूर लाभ उठाने की कोशिश करेंगें।

कृषक, ग्रामीण नवयुवकों एवं प्रसार अधिकारियों का प्रशिक्षण

कृषि विज्ञान केन्द्र कृषकों, कृषिरत महिलाओं एंव ग्रामीण नवयुवकों के निरंतर ज्ञान एवं दक्षता बढ़ाने हेतु पूरे वर्ष भर अल्पकालिक एवं दीर्घ कालिक प्रशिक्षण का आयोजन करता है। ये प्रशिक्षण केन्द्रो में कार्यरत वैज्ञानिक दल एवं क्षेत्र में उपस्थित विशेषज्ञो की सहायता से दिया जाता है। किसानों के लिए सुविधा हेतु कोई फीस नहीं रखी जाती है और आवासीय प्रशिक्षण में उसके रहने–खाने की व्यवस्था भी भारत सरकार द्वारा मुफ्त

उपलब्ध है। आमतौर ये प्रशिक्षण कृषि उत्पादन तकनीकों, कृषि यंत्रों एवं सुरक्षा उपायों, उन्नत बुवाई विधि, उन्नत किस्मों, तुड़ाई वे पैकेजिंग इत्यादि विषयों पर आयोजित होता है। जबकि रोजगारोन्मुखी विषय के तौर पर सब्जी उत्पादन, फल उत्पादन, गौ पालन, बकरी पालन, मधुमक्खी पालन, मशरुम उत्पादन, फल प्रसंस्करण, इत्यादि पर आधारित होता है।

इसके अलावा किसानों की आवश्यकता के अनुसार भी प्रशिक्षण आयोजित किये जाते हैं।

प्रसार अधिकारियों की ज्ञान एवं दक्षता को बरकरार रखने हेतु केन्द्र सूचीबद्ध तरीके से समसमाजिक विषयों पर प्रशिक्षण आयोजित करते हैं।

प्रसार गतिविधियाँ

वृहत पैमाने पर अच्छी तकनीकों को फैलाने के उद्देश्य से ये केन्द्र किसान मेला, किसान दिवस, प्रक्षेत्र भ्रमण, कृषक गोष्ठी, बैठकें, प्रदर्शनी, जागरुकता कैम्प, विशेष अभियान, कार्यशाला इत्यादि का आयोजन कर ग्रामीण सुदूर क्षेत्रों में स्थित किसानों को नई तकनीकों से अवगत कराते हैं जिससे उनकी कृषि उन्नतशील हो सके, उनका उत्पादन और आमदनी भी बढ़ाया जा सकें।

गुणवत्रापूर्ण बीज एवं रोपाई सामग्री उपलब्ध कराना

भारत के विभिन्न जिलों में कार्यरत कृषि विज्ञान केन्द्र, स्थानीय किसानों को अपने फार्म पर तैयार किये गये गुणवत्तापूर्ण बीज एवं पौध भी उपलब्ध कराते हैं जिससे उनकी नई किस्मों एवं तकनीकों का लाभ मिल सकें। इसके अलावा कृषक प्रक्षेत्रों पर उचित मार्गदर्शन देकर बीज एवं पौध तैयार कराया जाता है। जिससे अच्छी किस्मों का उपयोग अत्याधिक बढ़ाया जा सके ।

किसान मोबाइल सलाह द्वारा तकनीकी ज्ञान बढ़ाना

सभी किसानों तक व्यक्तिगत रुप से पहुंचना और प्रसार कार्यकर्त्ता की कमी की बाध्यता को ध्यान में रखकर, 'किसान मोबाईल सलाह' एक वैकल्पिक माध्यम के रुप में उभर कर आया है जो कि बहुत ही प्रभावी साबित हो रहा है। इसके उपयोग से कृषि विज्ञान केन्द्र एवं विभिन्न विभाग द्वारा संदेश आसानी से, बिना विलंब के सही किसानों के पास बहुत कम लागत में पहुँच जाता है। किसान अपने खेती के विभिन्न क्रिया–कलापों के समय इसका उपयोग करने मे सक्षम हो रहे हैं। शुरुआती दौर में किसानों को थोड़ी परेशानी हो रही थी पर धीरे–धीरे वे इसका पूरा उपयोग कर रहे हैं।

मोबाइल सलाह द्वारा किसानों को परिस्थिति के अनुसार उत्पादन, तकनीकों, सिंचाई विधि तुड़ाई एवं बाजार भेजने, इत्यादि विषयों पर संक्षिप्त में संदेश भेजा जाता है जबकि विस्तृत जानकारी के लिए कृषक बंधुओ को केन्द्र में सम्पक्र का आग्रह किया जाता है। किसान मोबाइल संदेष के माध्यम से बीमारियों, नत्रजन, बीज, किस्मों की भी जानकारी समय समय पर कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा दी जाती है। इस व्यवस्था की सफलता को देखते हुए, भारत सरकार ने एन॰आई॰सी॰ एवं किसान पोर्टल द्वारा मुफ्त संदेश भेजने की व्यवस्था भी की है। भविष्य में यह एक मजबूत संचार माध्यम के रुप में किसानों की सहायता करने मे सक्षम होगा।

कृषि विज्ञान केन्द्र मोबाइल धारक किसानों की सूची लेकर उसे अपने केन्द्र पर रजिस्टर्ड कर लेते है और फिर समय–समय पर उन्हें मोबाईल संदेश भेजकर उन्हे तकनीकी एवं केन्द्र की विभिन्न गतिविधियों की जानकारी देते हैं। कृषक महिलाएं भी इस व्यवस्था का उपयोग करने लगी है। प्रसार कार्यकर्ता, अधिकारी, आदान डीलर्स को भी यह संदेश भेजा जाता है जिससे उनके तकनीकी ज्ञान को भी बढ़ाया जा सकें।

कृषि विज्ञान केन्द्र की अन्य गतिविधियाँ

ये केन्द्र जिले में मिट्टी परीक्षण, खाद्य प्रसंस्करण एवं अन्य मुख्य पहलुओं पर भी ध्यान देते हैं जिससे किसानों को उनकी की खेती में सहायता की जा सके। कृषि विज्ञान केन्द्र जिलें में संचालित केन्द्र एवं राज्य

सरकार के विभिन्न योजनाओं के क्रियान्वयन में भी तकनीकी सहायता एवं अन्य सहयोग करता जिससे जिले के किसानों को अपने कृषि के बहुमुखी विकास में पूरा मदद मिल सकें। इनमें प्रमुख है दलहन की उन्पादकता बढाना, टी.एस.पी. मक्के में आइसोपाम जलवायु अनुरूप कृषि हेतु राष्ट्रीय पहल इत्यादि हैं।

किसानों द्वारा किये जा रहे प्रयोगों एवं नवाचारों को कृषि विज्ञान केन्द्र पहचानकर उनकी ओर अधिक विकसित करने एंव इनका प्रचार–प्रसार करने में भरपूर मदद करता है। इस व्यवस्था को और सुदृढ़ करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा प्रत्येक वर्ष पुरस्कार भी दिये जाते हैं जिससे किसानों मे नई तकनीकों/मुस्खों को लाने में अभिरुचि बढ़ाई जा सके।

भारतवर्ष में वर्तमान में कुल 641 कृषि विज्ञान केन्द्र हैं जिनका संचालन नई दिल्ली, स्थित पूसा में उपमहानिदेशक (कृषि प्रसार) के दिशा निर्देश में देशभर मे 8 क्षेत्रीय परियोजना निदेशालय द्वारा किया जाता है। कृषि विज्ञान केन्द्र की सफलता का प्रमाण इसी बात से लगाया जा सकता है कि इस मॉडल की माँग विदेशों से होने लगी है और सभी राज्य सरकारों द्वारा जिलें में एक की जगह दो केन्द्रों की माँग हो रही है। इसके परिणाम स्वरुप अभी तक देश में हुए जिलों में दो केन्द्रों के स्थापना की मंजूरी भी मिल गई और अधिकतर संचालित भी हो रहे हैं।

अतः भारतीय कृषि के निंरतर विकास में कृषि विज्ञान केन्द्र की भूमिका महत्वपूर्ण सराहनीय माना जा रहा है।

पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में बागवानी का प्रोन्नयन - केवीके की भूमिका

अजय कु. सिंह, सुव्रत कु. राय और हिमांशु कु. डे

भाकृअप–क्षेत्रीय परियोजना निदेशालय, क्षेत्र II, कोलकाता, पश्चिम बंगाल

ई.मेल: zpdkolkata@gmail.com

क्षेत्रीय परियोजना निदेशालय बिहार, झारखंड और पश्चिमी बंगाल के राज्यों तथा अंडमान एवं निकोबार द्वीप के केन्द्र शासित प्रदेश में फैले 83 कृषि विज्ञान केन्द्रों (केवीके) का अनुवीक्षण करता है। केवीके के अधिदेश में पशु पालन और मात्स्यिकी सहित कृषि के सभी क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी का मूल्यांकन, प्रौद्योगिकी उत्पादों का परिष्करण और प्रदर्शन करना शामिल है। पूर्वी क्षेत्र के कृषि विकास में बागवानी एकमहत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। बिहार, झारखंड और पश्चिम बंगाल के राज्यों में आम, लीची, केला, मालटा संतरा (मैन्डेरिन), काजू, अमरूद इत्यादि जैसी फल फसलों की अपार संभावनाएं हैं। बागवानी फसलों की उत्पादकता में सुधार लाने के लिए निदेशालय द्वारा कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से अनेक गतिविधियों व कार्यकलापों की पहल की गई है। इन पहलों की समीक्षा का एक संक्षेप नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है।

बगवानी विकास में कृषि विज्ञान केंद्रों का योगदान

क. किसानों और खेतिहर महिलाओं, ग्रामीण युवाओं तथा विस्तार पदाधिकारियों को प्रशिक्षण

मानव संसाधन विकास के लिए एक अधिदेशित कार्यकलाप के रूप में बिहार के कृषि विज्ञान केन्द्र ने वर्ष 2012–13 के दौरान खेतिहर किसानों, खेतिहर महिलाओं, ग्रामीण युवाओं और विस्तार पदाधिकारियों सहित 1,77,412 लाभार्थियों के लिए 5630 प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए। प्रशिक्षित किसानों और खेतिहर महिलाओं की संख्या 1,40,280 थी और उन्हें प्रदान किए गए पाठयक्रमों की संख्या 4154 थी। ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षण प्रदान करने के संबंध में, 22,281 प्रतिभागियों के लाभार्थ 952 पाठयक्रम प्रदान किए गए, जबकि 14,851 विस्तार पदाधिकारियों के लिए 524 पाठयक्रमों का आयोजन किया गया।

श्रेणी	पाठ्यक्रमों की सं.	कुल योग		
किसान एवं खेतिहर महिलाएं	4154	116030	24250	140280
ग्रामीण युवा	962	14025	8256	22281
विस्तार पदाधिकारी	524	13259	1592	14851
कुल	5630	143314	34098	177412

प्रशिक्षण कार्यक्रमों में जाति–वार प्रतिभागिता में यह देखा गया है कि 15.8 प्रतिशत प्रशिक्षणार्थी अनुसूचित जाति श्रेणी से थे। विश्लेषण में यह भी पाया गया है कि निम्न स्तर के सामाजिक–आर्थिक स्थिति वाले अधिकतर

किसान प्रशिक्षण के माध्यम से अपने आर्थिक उत्थान के लिए केन्द्रीय विज्ञान केन्द्रों से संपर्क करते हैं। कवर किए गए प्रमुख क्षेत्रों में समेकित फसल प्रबंधन, बीज उत्पादन, फसलीकरण प्रणाली, समेकित कृषि प्रणाली, संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकी, जल प्रबंधन, नर्सरी प्रबंधन, समेकित नाशीजीव प्रबंधन, पूराने उद्यानों / बगीचों का नवीनीकरण, स्व–सहायता समूहों के माध्यम से लिंग समानता, समेकित पोषण प्रबंधन, कृषि पशुओं का प्रबंधन, पशुधन आहार एवं चारा प्रबंधन आदि सम्मिलित थे। कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा ग्राहकों की आवश्यकता के अनुसार कैंप्स में तथा कैंप्स के बाहर दोनों तरह के पाठयक्रमों का आयोजन किया गया।

ख. रोपण सामग्रियां

बीजों का उत्पादन करने के अलावा, कृषि विज्ञान केन्द्रों ने सब्जियों, फलों, रोपण फसलों, वन्य प्रजातियों और अन्य के संबंध में इस क्षेत्र की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए बड़े पैमाने पर रोपण सामग्रियों के उत्पादन पर कार्यक्रम भी आयोजित किए। वर्ष 2013–14 के दौरान उत्पादित रोपण सामग्रियों की संख्या 12.97 लाख थी जो 82.79 लाख रूपयों की आय के बराबर थीं। सब्जियों में टमाटर, फूल गोभी, बैंगन, मिर्च, पत्ता गोभी और शिमला मिर्च आदि के लिए पौध उत्पादन पर विचार किया गया और टमाटर के लिए 2,53,309 पौध तथा उसके बाद बैंगन (1,27,440), पत्ता गोभी (1,04,897), मिर्च (67,411) और शिमला मिर्च (5,252) की पौधों का उत्पादन किया गया। फल की फसलों में सबसे ज्यादा पौध आम (1,33,326) के लिए और उसके बाद पपीता (95,719), अमरूद (34,280), लीची (19,099), केला (6,520) तथा अन्य फसलों के लिए तैयार को गईं। रोपण सामग्रियों के उत्पादन में क्रोटन, अशोक, औषधीय, एवं सुगंधित पादप, रोपण फसलें, मसालें तथा वन्य प्रजातियां शामिल थीं। कृषि विज्ञान केन्द्रों ने गेंदा (मेरीगोल्ड), रजनीगंधा (टयूबरोज), गुलदाऊदी (क्राईसेंथमेम) और डाहलिया इत्यादि रोपण सामग्रियों का भी उत्पादन किया।

ग. अमरूद के उद्यानों का पुनर्यौवन

खराब प्रकाश संश्लेषण दक्षता के कारण तथा वृक्ष अधिक की आयु, घने एवं एक दूसरे से चिपकी शाखाओं, उद्यानों के लापरवाह एवं खराब प्रबंधन सहित अनेक मिश्रित कारकों के कारण अमरूद के पेड़ों की उत्पादकता में कमी आती है। पेड़ में सघन एवं घनघोर शाखाएं होने के कारण कैनोपी में सूरज की तीव्रता एवं रोशनी नहीं आ पाती है जिसके कारण अमरूद के पेड़ों की उत्पादकता कम होती है। कृषि विज्ञान केन्द्रों ने एफएलडी (अग्रिम पंक्ति के प्रदर्शन) और प्रशिक्षण के माध्यम से पुराने वृक्षों के पुनर्यौवन के लिए वर्ष 2012 में एक पहल की है। सघन और अवांछनीय ृाखाओं की छटाई की जाती है ताकि खुली कैनोपी से सूरज की तीव्रता एवं रोशनी सुनिश्चित की जा सके जिसके परिणामस्वरूप प्रकाश संश्लेषण और पुष्पण में सुधार आता है। इस प्रकार, विभिन्न प्रशिक्षणों और एफएलडी कार्यक्रमों के माध्यम से अमरूद की उत्पादकता में 9.37 की वृद्धि लाई गई है। अमरूद की उपज में वृद्धि होने के कारण लगभग 50 हजार रूपए प्रति हेक्टे. का लाभ प्राप्त किया जा रहा है।

घ. पपीते की फसल के लिए हस्तक्षेप

पपीता (केरिका पपैया) एक महत्वपूर्ण फल फसल है जिसकी बेगुसराय जिले में वाणिज्यक दृष्टि से खेती की जाती है। यह उन बेहतर फसलों में सुमार है जिनमें पूरे वर्ष फूल और फल आते हैं। किसानों के लिए यह एक काफी लाभकारी फसल है। कृषि विज्ञान केन्द्र के प्रयासों से पहले बेगुसराय जिले में पपीते की खेती लगभग नहीं के बराबर की जाती थी। किसानों की यह सोच थी कि बेगुसराय में बड़े–बड़े टावरों तथा तेल

की रिफाइनरी से निकलने वाली गैसों के कारण जिले में पपीते की खेती नहीं की जा सकती है। खेत दौरा करते समय यह बात कृषि विज्ञान केन्द्र के विशेषज्ञों को पता चली। कृषि विज्ञान केन्द्र, बेगुसराय ने बहुआयामी विस्तार गतिविधियों एवं कार्यकलापों के माध्यम से पपीते की खेती को पुनरुजीवित करने के लिए एक विशेष प्रयास किया है। सबसे पहले केवीके ने एक नैदानिक सर्वेक्षण (Diagnostic Survey) किया और महत्वपूर्ण निष्कर्षों को संग्रहित किया। उपरोक्त के आधार पर केवीके द्वारा सर्वेक्षण के पश्चात बहुआयामी और सक्रिय विस्तार गतिविधियां शुरू की गईं तथा पपीते की खेती के लिए 15 चयनित उन्नतशील किसानों को पूर्णरूप से उन्नत कृषि विधियों का एक पैकेज दिया गया। इन इच्छुक किसानों को वर्ष 2009–10 के दौरान प्रशिक्षित किया गया। प्रशिक्षण के पश्चात किसानों की प्रतिपुष्टि (Feed back) प्राप्त की गई और उन्हें स्त्रीलिंगी (Gyanodioceious) सीएस किस्म रेड लेडी–786 और पान–2 दिया गया। केवीके द्वारा किसानों को सफल बनाने के लिए नियमित रूप से संपर्क साधकर उनमें विश्वास जगाया गया।

ङ. उपोत्पाद (By Product) के बेहतर उपयोग के माध्यम से अपशिष्ट (Residue) प्रबंधन

बिहार में धान की खेती करने वाले जिलों में अधिकतर मध्यम एवं बड़े किसान फसल की कटाई के लिए मिश्रित हार्वेस्टर का प्रयोग करते हैं। फसल की कटाई के पश्चात किसान फसल के अपशिष्ट को खेत में खुले में जला देते हैं, जिससे न केवल मृदा के स्वास्थ्य में गिरावट आती है अपितु पर्यावरण की दृष्टि से काफी गंभीर समस्याएं भी उत्पन्न होती हैं। केवीके, रोहताश ने खेतो में फसल के अपशिष्ट को खुले में जलाने के गंभीर परिणामों के बारे में किसानों में जागरूकता लाने तथा उन्हें फसल के अपशिष्ट से वर्मिन कंपोस्ट (कृमि खाद) बनाने हेतु प्रोत्साहित करने के लिए बड़े पैमाने पर जागरूकता कार्यक्रम शुरू किए हैं।

च. बहुमुखी (Multilayer) सब्जी फसलीकरण प्रणाली

निपानियां गांव (गोडा ब्लॉक) के किसान काफी लंबे समय से कुकरबिट (कद्दू) की खेती करते हैं जिसके लिए वह कद्दु की बेलों के फैलाव हेतु बरसात के मौसम के दौरान बांस और धागे का एक ढ़ांचा बनाते हैं (जिसे स्थानीय रूप से मचान के रूप में जाना जाता है)। इस प्रक्रिया में मचान के नीचे की भूमि को खाली रखा जाता है। जीवीटी–केवीक, गोड्डा ने सभी संसाधनों के इष्टतम उपयोग के लिए मचान में फैले कद्दु की बेलों के नीचे के खाली स्थान में जिमी कंद (EFY) (किस्म गजेन्द्र–1) की खेती का प्रदर्शन दिखाया। जिमी कंद के साथ तोरी (रिज गार्ड), लौकी (बोटल गार्ड) तथा करेले (बिट्र गार्ड) की बुवाई की गई। जिमी कंद करेले के लिए सर्वाधिक लागतःलाभ अनुपात 1:4.1 रिकॉर्ड किया गया, जबकि केवल लौकी की फसलीकरण के संबंध में यह मात्र 1:1.6 था। जिले में इस प्रौद्योगिकी को 16 एकड़ क्षेत्रफल में अपनाया जा रहा है।

आम और अन्य फसलों के लिए बगीचों के रखरखाव में लंबा वक्त लगने के कारण किसान आम और अन्य फल फसलों के बगीचों का रखरखाव करने में सक्षम नहीं थे। बागवानी से निरंतर अच्छा लाभ प्राप्त करने की पूर्वदर्शिता के चलते सरायकेला में केला (जी9) आधारित बहुआयामी बागवानी की खेती आरंभ की गई और आर्थिक प्रतिलाभों तथा पोषण सुरक्षा की दृष्टि के आधार पर यह प्रयास काफी सफल रहा। केले की खेती तथा केले के साथ सब्जियों (टमाटर, बैंगन और फूल गोभी) की खेती करने से, चावल के साथ मोनोक्रॉपिंग की तुलना में, कृषि परिवार आय में क्रमशः 62 और 76 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जिसका लागतःलाभ अनुपात के आधार पर आर्थिक प्रतिलाभ क्रमशः 14.80 एवं 23.80 पाया गया। जी9 किस्म की सेल्फ लाइफ (स्व जीवन) काफी अच्छी है और इसलिए बाजार में इसकी अच्छी कीमत मिलती है।

छ. आम आधारित गन्ने की अंतर-फसल

सामान्य रूप से, गोड्डा में किसान आम के बगीचों में किसी भी अन्य फसल की बुवाई नहीं करते हैं। प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान केवीके गोड्डा ने आम के बगीचों से अतिरिक्त उपज हासिल करने हेतु आम के पेड़ों के बीच खाली स्थान में अंतर फसल आरंभ करने का सुझाव दिया। यह पाया गया कि बगीचों की स्थापना के पहले वर्ष के दौरान उनका एलईआर (Land equivalent ratio) लगभग 1 था, चौथे वर्ष में लगभग 1.2 तथा 8 वर्षों के बाद लगभग 1.4 था। आठ वर्षों के बाद आम के पेड़ों से घिरा स्थान 35 प्रतिशत था तथा शेष स्थान गन्ने से घिरा था। आम के बगीचों में केवल आम की खेती से कुल 85 क्वि. प्रति हेक्टे. उपज प्राप्त की गई, जबकि गन्ने के साथ अंतर फसलीकरण से आम की उपज 92 क्वि प्रति हेक्टे. रिकॉर्ड की गई। आम की फसल के अलावा, किसानों ने एक हेक्टे. क्षेत्र में 482 क्वि. गन्ने की उपज भी प्राप्त की। वर्तमान में, 1000 एकड़ से अधिक के नये स्थापित आम के बगीचों में आम के साथ गन्ने की अंतर फसल की खेती भी की जा रही है।

ज. एफओसीटी

इस योजना को नारियल विकास बोर्ड ने शुरू किया है जिसे 'फ्रैंण्डस आफ कोकोनट ट्री' (FOCT) के नाम से जाना जाता है। इस योजना व स्कीम का उद्देश्य ऐसे किसानों का क्षमता निर्माण करना है जिन्हें प्रायः पादप संरक्षण उपायों को अपनाने तथा फसल की कटाई–तुड़ाई करने में कठिनाई होती है। बोर्ड 18.40 वर्ष की आयु के बेरोजगार युवाओं को 6 दिवसीय आवासीय प्रशिक्षण प्रदान करता है, जिनमें 30 प्रतिशत महिलाएं भी होती हैं। प्रशिक्षण को सफलतापूर्वक पूरा करने के पश्चात प्रतिभागियों को ताड़ के पेड़ पर चढ़ने के लिए मुफ्त में एक उपकरण (पाम कलाइंबिंग डिवाइस) दिया जाता है। जिले के विभागों के परामर्श से केवीके द्वारा लाभार्थियों का चयन किया जाता है। वर्ष 2013.14 के दौरान जोन-II के छः कृषि विज्ञान केंद्रों (नाडिया, हावड़ा, हुगली, 24 उत्तर परगना, 24 दक्षिण परगना, दक्षिण दिनाजपुर) ने बड़े सफलातापूर्वक एफओसीटी प्रशिक्षण का आयोजन किया, जिससे कुल 237 किसानों/खेतिहर महिलाओं को लाभ मिला।

ट. बड़ी इलाइची की खेती

बड़ी इलाइची (अमोमम सुबालेटुम) मसाला फसलों की ही एक फसल है और दार्जिलिंग में यह एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। मृदा में पोषणीयता की कमी तथा नाशीजीवों द्वारा फैलाए गए रोगों के कारण इस फसल की पैदावार कम होती है। फसल की पैदावार को प्रभावित करने में प्रमुख रोगों में चिर्की, फुर्की ता पत्ती अंगमारी रोग शामिल हैं, जिनके कारण बड़ी इलाइची की उपज कम होती है। चिर्की एवं फर्की रोग विषाणु (वायरल) होते हैं और ऐफिड (चेंपा/माहू) से संचारित होते हैं। दार्जिलिंग कृषि विज्ञान केंद्र सूक्ष्म पोषक बोरॉन के साथ गाय का गोबर और कृषि खाद जैसे जैविक उर्वरक का प्रयोग कर (पहाड़ी क्षेत्रों की मृदा अम्लीय होती है और उसमें बोरॉन की कमी होती है) फसल प्रबंधन तथा फसल के पौषण प्रबंधन पर जागरूकता एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन करता है। बड़ी इलाइची पर मुख्यतः पत्ती अंगमारी रोग के प्रबंध हेतु (जिसके कारण बड़ी इलाइची की कम उपज होती है) ऑन फील्ड परीक्षण (ओएफटी) किए गए। ओएफटी परीक्षण में यह पाया गया कि फसल प्रबंधन के साथ बोर्डीएक्स मिश्रण के प्रयोग से बड़ी इलाइची के कुल उत्पादन में 30.35 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई।

ठ. अदरक की खेती

अदरक (जिंगीबर ऑफिसिनेल) मसाला फसलों की ही एक फसल है और दार्जिलिंग में यह एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। अनेक रोगों के कारण, जिन्हें प्रकन्द सड़न रोग (राइजोम रॉट डिजीज) के नाम से जाना जाता है, अदरक का उत्पादन कम होता है। प्रकन्द सड़न रोग पिथुइम प्रजाति, फ्युसेरिम प्रजाति, सूत्रकृमि (पेटिलानचुस प्रजाति), रालस्टोनिया सोलेनेसेरूम इत्यादि जैसे नाशीजीवों के ग्रसन के कारण उत्पन्न होता है। फसल के खराब प्रबंधन के कारण भी अदरक की पैदावार कम होती है। केंद्र फसल संरक्षण, मृदा में अम्लता को कम करने हेतु मृदा में चूना मिलाने, रोगमुक्त राइजोम का चयन करने तथा रोगों से बचने के लिए उचित जल निकासी प्रणाली के साथ फसल के बेहतर प्रबंधन के लिए जागरूकता एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करता है। केंद्र ने 51 डिग्री. से. पर प्रकन्द (राइजोम) का गरम पानी से उपचार कर रोगों के प्रबंध हेतु अग्र पंक्ति का प्रदर्शन (एफएलडी) किया।

ड. फूल गोभी, अदरक और पालक की अंतरफसल

झारखंड के बोकारो जिले में खरीफ फूल गोभी की खेती करना एक सामान्य कृषि कार्य है। केवीके बोकारो ने गौण फसल के रूप में अदरक और पालक की अंतरफसल की खेती करना शुरू किया। फूल गोभी के प्रत्येक पौध के बीच 30 से.मी. का अंतराल रखते हुए गोभी के पौधों को प्रतिरोपण करने हेतु एक मेंढ़ से दूसरी मेंढ़ के बीच 40 से.मी. की दूरी रखकर मेंढ़ तैयार की गई। तत्पश्चात, मेंढ़ों के बीच खाली स्थान में पालक के बीज की बुवाई की जाती है। फूल गोभी के दो पौधों के बीच खाली स्थान में अदरक की बुवाई की जाती है। कूड (फरो) के द्वारा सिंचाई किए जाने से तीनों फसलों की सिंचाई की आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है। इस अंतरफसल प्रणाली से 5.1 लागतःलाभ अनुपात के साथ लगभग 7.0 लाख रूपए प्रति हेक्टे. का शुद्ध लाभ प्राप्त किया गया। इस प्रणाली को 5–6 गावों के किसानों द्वारा अपनाया जा रहा है, जहां सिंचाई का अन्य विकल्प उपलब्ध नहीं है।

त. सिट्रस का पुनर्यौवन

(मैन्डेरिन संतरा) दार्जिलिंग पहाड़ी क्षेत्रों की एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। दार्जलिंग में सिट्रस की मुख्य समस्या सिट्रस डाइबैक रोग है, जो नाशीजीवों द्वारा ग्रसन से फैले रोगों तथा पोषणीयता की कमी से उत्पन्न होता है। सिट्रस (नीबू बर्गीय फल) की फसल को नुकसान पहुंचाने वाले मुख्य नाशीजीवों और रोगों में तना बेधक ( ), फल मक्खी, मिलीबग (प्लानोकस सिट्री), ऐफिड (टोक्सोप्टेरा प्रजाति), गमोसिस (फाइटोप्थोरा पामीवोरा), सिट्रस ग्रीनिंग (लाइबेरोबेक्टर ऐसिएटिकुम), चूर्णिल फफूंद, फेल्ट इत्यादि शामिल हैं। मैन्डेरिन संतरे की पैदावार को बढ़ाने के लिए दार्जिलिंग केवीके सिट्रस (नीबू बर्गीय फल) के पुनरुज्जीवन व पुनर्यौवन के लिए निरंतर कार्य कर रहा है। मैन्डेरिन संतरे के पुनरुज्जीवन पर विशेष ध्यान देने के लिए दार्जिलिंग कृषि विज्ञान केंद्र सिट्रस उत्पादकों को सिट्रस की खेती (सिट्रस का पोषणीय प्रबंधन), नाशीजीवों तथा रोगों के प्रबंधन पर जागरूकता एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन करता है। सिट्रस उत्पादकों से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर जिले के विभिन्न स्थानों में ओएफटी (ऑन लाइन परीक्षण) तथा एफएलडी (अग्र प्रक्ति प्रदर्शन) कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। सिट्रस की समस्या पर इस केंद्र द्वारा एक आईसीटी एप्लीकेशन "सिट्रस ई.क्लीनिक" विकसित किया गया। इस केंद्र द्वारा आयोजित किए गए विभिन्न कार्यकलापों के माध्यम से किसानों को लाभ पहुंचाया गया है और किसान इस केंद्र द्वारा प्रसारित प्रौद्योगिकियों को अपना रहे हैं।

ब. उत्पादक संगठनों की स्थापना

हावड़ा कृषि विज्ञान केंद्र (केवीके) ने हावड़ा के अम्ता-I सामुदायिक विकास (सीडी) ब्लॉक में धुरखाली गांव में वर्ष 2013 में एक किसान ट्रस्ट (न्यास) की स्थापना में सहायता की। इस ट्रस्ट का नाम श्रीजन कृषि उन्नयन ट्रस्ट है। इस किसान ट्रस्ट की स्थापना को 100 मूंगफली उत्पादक किसानों को शामिल कर किया गया। हावड़ा केवीके ने पिछले दो वर्षों की अवधि के दौरान इन किसानों के लिए 2 क्षमता निर्माण कार्यक्रमों का आयोजन किया। वर्तमान में किसान ट्रस्ट (एफपीओ) उत्पादित मूंगफलियों के भंडारण, प्रसंस्करण तथा मूल्य वर्धन का कार्य करता है। नाबार्ड ने उत्पादित मूंगफलियों के प्रसंस्करण और मूल्य वर्धन हेतु बुनियादी ढांचा सुविधाओं के लिए हाल ही में 15 लाख रूपयों की स्वीकृति प्रदान कर एक अहम भूमिका निभाई है।

हुगली कृषि विज्ञान केंद्र (केवीके) नाबार्ड द्वारा प्रायोजित किसान उत्पादक संघ की योजनाओं में एक तकनीकी साझेदार है, जिन्हें जिले के 5 सामुदायिक विकास (सीडी) ब्लॉकों को सम्मिलित कर हुगली में कार्यान्वित किया जा रहा है। हुगली केवीके ने पिछले दो वर्षों के दौरान इन किसानों के लिए 15 क्षमता निर्माण प्रशिक्षण कायक्रमों का आयोजन किया और अब यह प्रशिणार्थी किसान आलू कंद बीजों का उत्पादन करने के लिए पर्याप्त रूप से समर्थ हैं।

द. विपणन संपर्कों की स्थापना

गुमला में विश्शल मात्रा में गैर.फार्म आधारित संसाधन उपलब्ध हैं। जनजातीय लोग इन संसाधनों को एकत्र कर व्यक्तिगत रूप से स्थानीय बाजार में बेच देते हैं। केवीके ने जामुन पावडर, जामुन सिरका, आवंला सुपारी, सतावर जेम, टमाटर सूप, शहद, अचार, अमरूद जेली, आडू जेम आदि जैसे मूल्य वर्धित उत्पादों के उत्पादन के लिए प्रशिक्षण प्रदान किया। इसके अलावा, महिला स्वयं साहयता समूहों को बाँस के शिल्प तथा बाँस आधारित सजावटी वस्तुओं को तैयार करने में भी प्रशिक्षण दिया गया। इन उत्पादों को हॉस्ट संगठन, विकास भारती द्वारा से बेचा जाता है। केवीके ने इन उत्पादों के विपणन के लिए कुछ निजी डीलरों के साथ भी संपर्क साधा है।

केवीके ने महिला स्व सहायता समूहों द्वारा उत्पादित उत्पादों (चटनी, अचार, मोमबत्ती, अगरबत्ती आदि) का केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल (सीआरपीएफ), 22 बटालियन, हजारीबाग को किए जा रहे विपणन में भी हस्तक्षेप किया। इन उत्पादों को पवित्र धार्मिक स्थानों पर बेचने के अलावा, केवीके वाशिंग पावडर, अचार, फिनाइल, मोबत्ती, बीज, रोपण सामग्रियों आदि जैसे विभिन्न उत्पादों को बेचने के लिए एक आटलेट (केंद्र) को भी संचालित करता है। केवीके ने 200 सदस्यों से भी अधिक के मशरूम उत्पादक संघों की स्थापना में सहायता की है। रेस्तरों, होटलों, बैकरियों, सब्जी दुकानदारों आदि के माध्यम से संघ विभिन्न उत्पादों की बिक्री करता है और उपभोक्ताओं की नियमित मांग एवं आपूर्ति सुनिश्चित करने हेतु नजदीकी जिलों, अर्थात गिरीडिह, रामगढ़ और कोडर्मा से मशरूम की खरीद कर उसे उपलब्ध भी कराता है।

केवीके रांची के पास प्रशिक्षणार्थियों द्वारा निर्मित उत्पादों, आदि की बिक्री के लिए एक सुव्यवस्थित बिक्री काउंटर हैं जो 30 वर्षों से अधिक की समयावधि से कार्यरत हैं। प्रशिणार्थियों द्वारा तैयार किए गए तथा बिक्री काउंटर से बेचे गए उत्पादों में शहद, कृमि खाद, अंडे, चिड़ियां, फूल एवं फल की पौध एवं बीजू, मौसमगत सब्जियां, टमाटर की चटनी, गाय का दूध आदि शामिल हैं। केवीके रांची ने वर्ष 2013.14 के दौरान 8800 कि.ग्रा. शहद; 9752 डकलिंग (बतख); 21,960 फूल एवं सब्जी की पौधों; 125 क्वि. धान; 54 क्वि. कृमि खाद आदि की बिक्री की। यह उत्पाद ग्राहकों में काफी लोकप्रिय हैं।

निष्कर्ष

निदेशालय कृषि विज्ञान केंद्रों को कार्यक्रमों की बेहतर सुपुर्दगी के लिए निरंतर नये अर्थोपायों का अभिनव करने के लिए तकनीकी सहायता और सूचना सहायता प्रदान करता है और उन्हें प्रोत्साहित करता रहता है। विस्तार प्रणाली में सार्थक बदलाव लाने के लिए इन पर प्रयोग किया जा रहा है। बागवानी फसलों के संबंध में भी अनेक अभिनव अर्थोपायों के विपणन का प्रयास किया गया है। उपयुक्त फारवर्ड संपक्र स्थापित कर इनका उन्नयन किया जाना है। बीजों और रोपण सामग्रियों के प्रसार के लिए पश्चिमी मिदनापुर द्वारा स्थापित केवीके का सेटेलाइट केंद्र अच्छा कार्य कर रहा है। उत्पादन के लिए निजी उद्यमियों द्वारा सुविधाओं का प्रबंधन किया जा रहा है, जबकि कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा तकनीकी सहायता और दिशानिर्देश दिए जाते हैं। इस व्यवस्था से बीज की अभावग्रस्ता की समस्या काफी हद तक हल हुई है। इस क्षेत्र के अनेक किसानों ने बागवानी के क्षेत्र में उत्कृष्ट उपलब्धि के लिए राष्ट्रीय तथा राज्य स्तरीय पुरस्कार प्राप्त किए हैं। किसानों को सम्मानित करने हेतु दिए गए महत्वपूर्ण पुरस्कारों में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा प्रदान किया गया जगजीवन राम अभिनव किसान पुरस्कार 2010–11; जगजीवन राम अभिनव किसान पुरस्कार 2012–13; मुख्य मंत्री किसान पुरस्कार; प्रसार भारती पुरस्कार 2010 और उन्नतशील किसान पुरस्कार आदि शामिल हैं।

श्री विधि (एस. आर. आई.) तकनीक से धान/संकर धान की खेती

वीरेन्द्र सिंह

निदेशक, चावल विकास निदेशालय, भारत सरकार, कृषि मंत्रालय,
कृषि एवं सहकारिता विभाग, पटना, बिहार

श्री विधि से धान की खेती को प्रोत्साहित करने के लिए भारत सरकार द्वारा चलाई जा रहीं विभिन्न योजनाओ– राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन एवं पूर्वी राज्यों के लिए हरित क्रान्ति योजना के अर्न्तगत किसानों को प्रत्यक्षण हेतु बीज, सूक्ष्म पोषक तत्व, एवं कोनोवीडर/माक्रर आदि पर अनुदान दिया जा रहा है। परिणाम स्वरुप वृहद पैमाने पर किसानों द्वारा अपने स्तर पर भी श्री विधि से धान की प्रति इकाई उत्पादन एवं उत्पादकता में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। इस समय भारत के प्रायः सभी राज्यों में इस विधि से खेती की जा रही है जिससे राष्ट्रीय स्तर पर धान की प्रति इकाई उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि हुई है जिससे हमारी बढती जनसंख्या के अनुरुप खाद्य उत्पादन में वृद्धि के लक्ष्य को हासिल किया जा सकता है।

धान खाद्य फसलों में सबसे प्रमुख फसल है। इसकी खेती प्राचीन काल से ही विश्व के अधिकांश देशों में होती है। इसकी खास विशेषता है कि तीनो ऋतुओं में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जाती है। यद्यपि अभी तक यही मान्यता रही है कि अच्छी पैदावार लेने के लिए बहुत अधिक पानी एवं बीज की जरूरत होती है। परन्तु 1980 के दशक में सर्वप्रथम मेडागास्कर के कृषि वैज्ञानिको ने एक ऐसी नई तकनीक को अपनाया जिस विधि में मात्र 2 किलोग्राम प्रति एकड़ धान के बीज की आवश्यकता होती है। उक्त तकनीक से न केवल बीज की कम मात्रा एवं बिचड़ा तैयार करने में लगने वाले अधिक समय की बचत होती है बल्कि पहले से प्रचलित विधि द्वारा रोपे गये धान की तुलना में अधिक उत्पादन भी होता है। इस विधि को अपनाने का दो प्रमुख उद्देश्य यह है कि धान के उत्पादन को बढ़ाना एवं पानी पर अधिक निर्भरता को कम करना। इस तकनीक से धान की खेती करना आसान और अधिक फायदेमन्द हो गयी है। वैसे क्षेत्रों में भी आसानी से धान की खेती की जा सकती है, जहाँ पानी की उपलब्धता कम एवं सिंचाई सुनिश्चित हो। इस तकनीक द्वारा डेढ़ गुना उत्पादन किया जा सकता है।

एस. आर. आई. तकनीक द्वारा सफलतापूर्वक खेती करने के लिए मुख्य रूप से निम्नलिखित छः बिन्दुओं पर ध्यान देना जरुरी है।

1. शीघ्र रोपाई: जैसा की अभी तक धान की रोपाई करने के लिए धान की बुवाई के 25–30 दिनों बाद बिचड़ो को इस्तेमाल में लाया जाता है, जबकि इस विधि में मात्र 8–12 दिन के बाद जब बिचड़े में मात्र 2 पत्ती एवं कम जड़े होती है, रोपाई के लिए इस्तेमाल में लाते है। इस अवस्था के बिचड़ों की रोपाई में कुछ सावधानियाँ

रखना अति आवश्यक है। इस विधि में रोपाई करने से एक बिचड़ा से बहुत किल्ले निकलते है, एवं मजबूत जड़ों का विकास होता है जो कि अधिक उत्पादन के लिए बहुत जरूरी है।

2. सावधानीपूर्वक रोपाईः जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है कि बिचड़ा का कम दिनों का होने के कारण यह बहुत ही नाजुक होता है, इसलिए बिचड़ो का बीजस्थली से उखाड़ने एवं रोपाई में कुछ सावधानी बरतने की आवश्यक्ता होती है। यहॉ सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि बिचड़ा के जड़ के साथ लगने वाला धान के बीज एवं मिट्टी को सावधानी पूर्वक बीज स्थली से उखाड़कर खेत में रोपाई के समय बिचड़ो के जड़ को मिट्टी में अधिक गहराई में न गाड़ने के बजाय मिट्टी के हल्का सम्पर्क में रोपना उचित होगा।

3. पौधा से पौधा की दूरीः इस विधि द्वारा धान की रोपाई के लिए पंक्ति से पंक्ति एवं पौधा से पौधा की दूरी 25 से.मी. × 25 से.मी. रखना है। इस वर्गाकार रोपा विधि में एक जगह एक बिचड़ा ही रोपा जाता है। इस विधि द्वारा रोपा गया एक पौधा से जड़ो की कल्लों के विकास के लिए पर्याप्त जगह, धूप, पोषक तत्व एवं पानी मिलता है, जिससे पौधों के बीच एक बिचड़ा से बहुत सा स्वस्थ कल्ला निकलता है, जिससे धान की पैदावार बढ़ जाती है। खेतों में खरपतवार नियंत्रण एवं अन्य पोषण के लिए आवश्यक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा कम होती है। अर्न्तवर्ती क्रिया–कलापों के लिए पर्याप्त जगह मिल जाता है। इस विधि में अर्न्तवर्ती फसलें भी आसानी से लगाया जा सकता है।

4. खरपतवार नियंत्रण एवं वात सरंध्रताः खेतों में खरपतवार नियंत्रण करने के लिये यंत्र का भी आसानी से इस्तेमाल किया जाता है, जिससे मिट्टी का ऊपरी भाग भुरभुरा एवं हल्का बना दिया जाता है। इस विधि से एक साथ दो फायदे हैंः पहना यह कि खरपतवार नष्ट होने से फसलों एवं घास के बीच कोई प्रतिस्पर्धा नही रहती। दूसरा मिट्टी हल्की होने से जड़ को हवा भी पर्याप्त मिलती है, जिससे जड़ क्षेत्र में लाभदायक वायवीय जीवाणुओं को पनपने में सहायता मिलती हैं। धान की बाली निकलने की अवस्था आने से पहले चार बार खरपतवार नियंत्रण करने की आवश्यकता होती है, जिससे कि फसल पूर्णरूप से खरपतवार मुक्त हो। धान रोपा के दस दिन बाद प्रथम खरपतवार नियंत्रण करने की जरूरत होती है।

5. जल प्रबंधनः एस. आर. आई. विधि द्वारा धान की खेती करने में समुचित जल प्रबंधन सबसे प्रमुख हैं। यह विधि वैसे क्षेत्रों में सफलतापूर्वक किया जाता है, जहां सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था हो जिससे कि खेतों में उचित नमी बनाए रखने के लिए जरूरत पड़ने पर पानी दिया जा सके। इस विधि की खास विशेषता यह है कि खेतो में लगातार पानी नही रखना है। बार–बार कुछ अन्तराल पर खेतों में पानी डालना एवं खेतों को सूखा (पानी रहित) रखना पड़ता है ताकि मिट्टी में वायु संचार होता रहें। मिट्टी को निश्चित अन्तराल पर गीला एवं सूखा रखने से पौधो में जड़ एवं कल्लों का विकास अधिक होता है। सभी उर्वरकों की उपलब्धता भी अच्छा होने के साथ–साथ नत्रजन उर्वरकों की बर्बादी नही होती है, बल्कि पोषक तत्वों का उपयोग क्षमता बढ़ जाती है। इस विधि से पौधों की उचित वृद्धि होने से उत्पादन बढ़ जाता है।

6. कम्पोस्ट का इस्तेमालः एस. आर. आई. विधि द्वारा की जाने वाली खेती में रासायनिक उर्वरको की अनुशंसित मात्रा के अलावा संतुलित उर्वरक एवं मिट्टी की भौतिक दशा सही रखने के लिए लगभग 10 टन कम्पोस्ट प्रति हेक्टर की मात्रा आवश्यक होती है।

एस. आर. आई. विधि द्वारा खेती करने के लिए क्षेत्र का चुनावः इस विधि से खेती करने के लिये भूमि का चुनाव अति महत्वपूर्ण है। इसके लिये ऐसे क्षेत्रों का चयन जरूरी है, जहां सिचाई के लिए पर्याप्त जल हो। नदी का कमाण्ड क्षेत्र सबसे उपयुक्त है, जहां जरूरत के अनुसार खेत में पानी दिया जा सके। ऐसे क्षेत्रों में प्रत्यक्षण के लिये उपयुक्त होता है जहां धान के पैदावार को क्षमतानुरूप लिया जा सके।

बीजस्थली की तैयारी एवं बिचड़ा तैयार करनाः एस. आर. आई. विधि में बीजस्थली का चयन, तैयारी एवं उसमें धान का बिचड़ा तैयार करना बहुत महत्वपूर्ण है। इसके बिना उक्त विधि से खेती करना बहुत मुश्किल है। बीज स्थली की तैयारी हेतु वैसे खेतो का चयन करना चाहिये जहां सिचाई की सुविधा के साथ–साथ जल निकासी की भी व्यवस्था हो। इसकी तैयारी बागवानी फसलों के लिये जैसे बीजस्थली को तैयार किया जाता है उसी प्रकार इसमें मिट्टी को हल्का भुरभुरा एवं समतल बनाना जरूरी है। इसके अलावा इन बातों पर भी ध्यान रखना जरूरी हैः

- समतल किये गये खेतो में पानी डालकर गीला बीजस्थली तैयार करना तत्पश्चात बीजस्थली के चारों कोनों में 9 इंच लकड़ी की पट्टी लगा देने से प्रत्येक बीजस्थली की मिट्टी बाहर नही बहती।
- बीजस्थली के लिए हल्की एवं भुरभुरी मिट्टी को जमीन से 3–4 इंच ऊंची करना।
- इसके बाद बीजस्थली के ऊपर कम्पोस्ट/उर्वरक की महीन एवं हल्की परत डाल दिया जाता है।
- तत्पश्चात 36 घंटा पानी में भिगोने के बाद 24 घंटा नमी बनाये रखने के बाद अंकुरित धान के बीज को सावधानी पूर्वक बीजस्थली के ऊपर अच्छी तरह समान रूप से छिडक देना चाहिये ताकि बिचड़ा जल्द तैयार हो। तत्पश्चात उनपर कम्पोस्ट/गोबर खाद की बारीक परत डाल देना चाहिये।
- इसके बाद बीजस्थली को पुआल से ढ़क देना चाहिये ताकि अधिक समय तक नमी बनी रहें।
- बीज स्थली के ऊपर पानी डालने के बाद इस बात का ध्यान रखना जरूरी है कि कही भी जल जमाव नहीं हो।

बीजस्थली से बिचड़ा उखाड़ने की विधिः बीजस्थली से 8–12 दिन पुरानी बिचड़ा जब मात्र दो पत्ती की अवस्था में हो तो रोपनी करने के लिये बीजस्थली से सावधानी पूर्वक उखाड़ना अति आवश्यक है। जिससे रोपने में बिचड़ा के जड़ो को गीली मिट्टी में हल्के ढ़ंग से मिट्टी के सम्पर्क में रोपना चाहिए।

रोपा के लिए खेतों की तैयारीः एस. आर. आई. तकनीक से धान की खेती करने के लिए खेतों की तैयारी भी ठीक उसी तरह से किया जाता है जैसा कि पूर्व में किया जाता था। इसमें खेत को पूर्ण रूप से समतल किया जाना जरूरी है ताकि पूरे खेत में एक समान पानी दिया जा सके एवं कहीं भी जल जमाव न हो।

रोपा के समय पौधा से पौधा एवं पंक्ति से पंक्ति की दूरी 25 से.मी. × 25 से.मी. रखना है। इसके लिए पतली रस्सी में 25 से.मी. की दूरी पर चिन्ह लगाकर दोनों ओर से पंक्ति की दूरी निश्चित करने के बाद वर्गाकार विधि से दोनों पंक्ति के मिलान बिन्दु पर एक साथ मात्र एक बिचड़ा रोपा करना उचित होगा। इससे खरपतवार नियंत्रण एवं अंर्तवर्ती फसल लगाने में सुविधा होगी।

समूचे खेत में जल निकासी के लिये प्रत्येक 5–10 मीटर पर एक नाली का निर्माण करना, जिसके सहारे खेतो में जरूरत से अधिक पानी को समयानुसार बाहर निकाला जा सके।

रोपाई एवं खेतों की देखभालः रोपा के समय सबसे जरूरी ध्यान देने की बात है कि पौधा एवं पंक्ति की दूरी 25 से.मी. × 25 से.मी. पर वर्गाकार ढ़ंग से एक जगह सिर्फ एक ही बिचड़ा रोपना है।

खेतो को नियमित अन्तराल पर गीला एवं सूखा रखना आवश्यक है। इसके लिए हमेशा हल्की सिंचाई की जरूरत होती है। जिससे भूमि में हमेशा नमी बनी रहे एवं दूसरी ओर जल जमाव की भी स्थिति नही आती।

जहां पर संकर धान की खेती होती है वहां श्री तकनीकी को अपनाकर उत्पादकता को 45–50 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है। इस विधि से न केवल 70 प्रतिशत बीज की बचत होगी बल्कि 30–40 प्रतिशत पानी की भी बचत होती है। परिणामस्वरूप बिजली एवं डीजल (30–40 प्रतिशत बचत) की भी बचत होगी। संकर धान श्री विधि के द्वारा उन्नतशील प्रजातियों की तुलना में अधिक पैदावार देता है। इस तकनीक से खाद एवं बीज दोनो की बचत होती है। एक खास बात यह भी है कि अगली फसल को बिना विलम्ब किए हुए उस खेत में सही समय पर अगले फसल को लगाया जा सकता है।

श्री तकनीक एवं परंपरागत विधि की खास विशेषतायें

क्र.सं.	घटक	श्री विधि	परंपरागत विधि
1	**बीज दर**	5 किलोग्राम/हेक्टर	15 किलोग्राम/हेक्टर (संकर धान) 35–40 किलोग्राम/हेक्टर (उन्नतशील प्रजाति)
2	**बीचड़े की अवधि**	8–10 दिन	20–25 दिन
3	**बीजस्थली**	पूर्ण सड़ा हुआ गोबर/कम्पोस्ट को मिट्टी की सतह पर डालकर अंकुरित बीज डालना है, ताकि रोपाई के लिए उखाड़कर एक–एक बिचड़ा मिट्टी सहित अलग करके रोपा जा सके। क्षेत्र : 35–40 वर्गमीटर एक हेक्टर रोपाई के लिए।	घना बिचड़ा 2–3 बिचड़ा एक साथ मिट्टी सहित रोपा जाता है। क्षेत्र : 100 वर्गमीटर एक हेक्टर रोपाई के लिए।
4	**पौधे एवं पंक्ति की दूरी**	25 से.मी. × 25 सेमी0 (पौध से पौध एवं पंक्ति से पंक्ति)	20 × 10 सेमी0 15 × 15 सेमी0 (पौध से पौध एवं पंक्ति से पंक्ति)
5	**खाद/उर्वरक**	कार्बनिक	कार्बनिक एवं अकार्बनिक (रासायनिक)

6	**जल प्रबंधन**	खेत को हमेशा गीला एवं सूखा रखना है। खेत में जल जमाव नहीं रखना है, उत्तम जल निकासी की व्यवस्था होनी चाहिए।	खेत में जल जमाव किया जाता है हमेशा 2–3 से.मी. पानी लगा रहता है।
7	**खरपतवार नियंत्रण**	यांत्रिक विधि से खरपतवार को मिट्टी में मिला दिया जाता है, ताकि मिट्टी में वायु संरध्रता बनी रहें।	रासायनिक खरपतवार नाशी का इस्तेमाल

श्री विधि की विशेषताएं

1. बीज की बचत (65–70 प्रतिशत)
2. 30–45 प्रतिशत अधिक उत्पादन
3. फसल शीघ्र पक कर तैयार होना (कम अवधि में फसल तैयार होना)
4. सिंचाई जल की बचत (30–40 प्रतिशत)
5. जैविक खाद का अधिक इस्तेमाल
6. कीटनाशी का कम प्रयोग
7. प्रति इकाई अधिक उत्पादन
8. ऊची एवं मध्यम जमीन के लिए उपयुक्त एवं
9. किसान को अधिक मुनाफा
10. धान गेहूं फसल चक्र के लिए उपयुक्त

उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्रों के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान क्षेत्रीय केन्द्र, पूसा द्वारा किये गये शोध कार्य एवं गेहूँ के उन्नत प्रभेदों की अनुशंसित सघन सस्य पद्धतियाँ

आई.एस. सोलंकी एवं सी.बी. सिंह

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान क्षेत्रीय केन्द्र, पूसा, बिहार

सर्वप्रथम पूसा संस्थान ने देश में कृषि शोध कार्य का श्री गणेष करने का सौभाग्य पाया। पूरे दक्षिण–पूर्व एशिया महाद्वीप में इसी पूसा को कृषि में शोध करने के लिए सबसे उपयुक्त स्थान पाया गया और यह घटना लगभग एक सौ दस वर्ष पहले की है। जब तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने निर्णय लिया कि बिहार राज्य के दरभंगा जिले (अब समस्तीपुर) के पूसा नामक स्थान में ही कृषि शोध के लिए एक अन्वेशणालय की स्थापना की जाय और इसी उद्देश्य से पहली अप्रैल सन् 1904 को इसकी स्थापना हुई, जिसके पहले निदेशक श्री बी. कोवेन्ट्री हुए तथा पहली अप्रैल 1905 को तत्कालीन गवर्नर जनरल लॉर्ड कर्जन ने इसकी नींव डाली। तब ईस्ट इंडिया कम्पनी'' का राज था और पूसा जैसी छोटी जगह में सन् 1896 में डाकघर की स्थापना की गई। बहुत सारे बड़े शहरों की अपेक्षा उस समय पूसा में डाकघर की स्थापना के कारण इस क्षेत्र के लोगों को डाक व्यवस्था का लाभ पहले ही मिल गया। शिक्षा के प्रसार के लिए सन् 1912 में उच्च विद्यालय की स्थापना पूसा में हो चुकी थी।

सरैसा क्षेत्र जिसमें पूसा अवस्थित है, तम्बाकू के लिए उपयोगी पाकर ईस्ट इंडिया कम्पनी ने सन् 1877 में कलकत्ता के बेग डनलप कम्पनी को पूसा में तम्बाकू पर शोध तथा इसके विकास के लिए जमीन दी थी और आज भी यहॉ तम्बाकू की बहुत अच्छी उपज ली जा रही है। इम्पिरियल इन्सटीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च में गेहूँ तथा अन्य फसलों में महत्वपूर्ण कार्य हुए। सन् 1911 में गेहूँ का एक प्रभेद विकसित किया गया पी0 4 (एन0 पी0 4) जो इतना पसंद किया गया कि भारतीय उपमहादेश के साथ–साथ ऑस्ट्रेलिया आदि देशों में भी फैल गया। आज भी एन0 पी0 4 को इसके कुछ विशिष्ट गुणों के कारण प्रयोग में लाया जाता है। डॉ0 हॉवार्ड तथा ग्रैबिएल हॉवार्ड ने गेहूँ अनुसंधान में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया जिस कारण बिहार तथा उतर प्रदेष के बहुत बड़े बारानी क्षेत्रों के किसानों को लाभ मिला। सर एफ0 जे0 एफ0 शॉ ने कई अन्य फसलों के प्रभेद भी विकसित किए। दलहन, तम्बाकू, तीसी, सरसों, धान तथा सब्जियों के कुछ प्रभेद किसानों के लिए वरदान साबित हुए। डॉ0 जे0 डब्ल्यू लेथर ने भूमि की उर्वरता, सिंचाई तथा अम्लीय/क्षारीय भूमि सुधार के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

सन् 1913 से 1925 के बीच कई तरह की अन्य महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्रकाशित हुईं जिनमें ई0 जे0 बटलर द्वारा गेहूँ की खेती कैसे करें और पौधों में फफूँद रोगों की जानकारी तथा टी0 बी0 फ्लेचर द्वारा पौधों में लगने वाले कीट/व्याधियों का ब्यौरा प्रमुख स्थान रखते हैं। इस बीच डॉ0 बटलर ने गेहूँ की पी0 52 (एन0 पी0

52), पी0 80–5 (एन0 पी0 80–5) तथा पी0 165 (एन0 पी0165) नामक उन्नत प्रभेद भी विकसित किए। कई और किसानोपयोगी गेहूँ की प्रजातियाँ यथा शर्बती, दारा, सफेद पिस्सी, चंदौसी, करॉंची च्वाइस व्हाइट, हार्डरेड कलकत्ता, लाल कनक, लाल पिस्सी, बंसी, कठिया, मालवी भी निकाली गईं जिन्हें भारत के गेहूँ क्षेत्रों के किसानों ने लाभप्रद पाया।

1950–51 के वर्ष में क्षेत्रीय केन्द्र पूसा में गेहूँ पर शोध के लिए नये सिरे से कार्य शुरू किए गए। उसी समय गेहूँ की तीन प्रसिद्ध किस्में एन0 पी0 835, एन0 पी0 852 तथा एन0 पी0 884 विकसित की गईं। इन प्रभेदों के कतिपय विशिष्ट गुणों के कारण अभी भी गेहूँ प्रजनन में इनकी उपयोगिता बनी हुई है। यह बात सन् 1964 से 1969 के बीच की है। मैक्सिको के डॉ0 नॉर्मन ई0 बोरलाग ने गेहूँ की कुछ प्रजातियां यथा सोनोरा 64, लरमा रोहो, पी0 बी0 18 इत्यादि का वहाँ विकास किया था। तत्कालीन कृषि मंत्री डॉ0 सुब्रहामण्यम तथा प्रख्यात वैज्ञानिक डा0 एम0 एस0 स्वामीनाथन के प्रयास से इन किस्मों की जाँच भारत वर्ष के कुछ अनुसंधान केन्द्रों पर सन् 1964–65 में की गई। उन कुछ केन्द्रों में क्षेत्रीय स्टेशन पूसा भी था और यहीं से हरित क्रांति का सूत्रपात हुआ। फिर तो इन अधिक उपजाऊ प्रभेदों के संकरण से अनेक प्रभेद विकसित किए गए जिनमें कई प्रभेद पूसा के ही हैं। इस तरह हरित क्रांति के सूत्रपात में इस केन्द्र का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

सन् 1978 से 1996 के बीच में इस केन्द्र द्वारा गेहूँ की निम्न सात प्रजातियाँ विकसित की गई जैसे – एच0 पी0 1102, एच0 पी0 1209, एच0 पी0 1493, एच0 पी0 1633 (सोनाली),एच0 पी0 1731 (राजलक्ष्मी), एच0 पी0 1744 (राजेष्वरी) तथा एच0 पी0 1761 (जगदीश)। ये सभी प्रभेद पूर्वोतर भारत में उत्पादन के लिए उपयुक्त हैं। इनमें एच0 पी0 1102, एच0 पी0 1731 तथा एच0 पी0 1761 अगात तथा सिंचित अवस्था, एच0 पी0 1493 अगात असिंचित तथा शेश तीन पिछात सिंचित खेती के लिए अनुषंसित है।

1977 से 1984 के अंतराल में जौ की पाँच किस्में विकसित की गईं यथा पी0 103, पी0 147, पी0 267, पी0 402 तथा पी0 449 दलहनी फसलों में अरहर की एक बहुत अच्छी किस्म पूसा– 9 का विकास सन् 1993 में किया गया। इस प्रभेद का विशिष्ट गुण इसके छोटे पौधे हैं, जिन्हें परम्परागत बुआई से अलग रबी फसल से पहले सितम्बर में ही लगाया जा सकता है। इसकी उपज क्षमता भी काफी अच्छी है। हाल के वर्षो में देखा गया है कि पूसा–9 अरहर को किसानों ने काफी पसन्द किया है और इसकी माँग मध्य प्रदेश, उतर प्रदेश, बंगाल आदि राज्यों तक फैल गई है। सन् 1998 में तोरी की दो नई किस्में पूसा अग्रणी तथा पूसा जगन्नाथ भी इस केन्द्र की देन हैं। केन्द्र द्वारा किसानों के लिए एक और उपयोगी देन है – पपीता के कुछ उन्नत प्रभेदों का विकास, जो इस प्रकार हैं पूसा जायंट, पूसा मैजेस्टी, पूसा डेलिसियस, पूसा डबार्फ तथा पूसा नन्हा। चूँकि इस सीमित प्रक्षेत्र में इन सभी प्रजातियों की शुद्धता का निर्वहण संभव नहीं है इसलिए चार प्रभेदों का उत्पादन भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के अन्य केन्द्रों पर होता है। पूसा में केवल पूसा डवार्फ प्रभेद का ही उत्पादन किया जा रहा है। इस केन्द्र के वैज्ञानिकों ने कृषि वैज्ञानिकों तथा कृषकों के लिए दो नवीन अनुसंधान किए। पहला गेहूँ के झूलसा रोग (फोलियर ब्लाईट) के अध्ययन के लिए दो संख्या पद्धति (डबल डिजिट सिस्टम) का निर्धारण जिसको विष्व भर में मान्यता प्राप्त है और दूसरा पूर्वोतर भारत में गेहूँ की बुआई के लिए कतारों की दूरी तथा बीज की मात्रा का निधार्रण।

परंपरागत कृषि प्रणाली के साथ–साथ जीरो टिलेज बुआई यंत्र की सहायता भी दी जाती है। पिछले कुछ वर्शो के अनुभव से देखा गया है कि जीरो टिलेज बुआई यंत्र से किसानों को भारी लाभ हुआ है। इस विधि का प्रचार/प्रसार बड़े पैमाने पर करने की आवश्यकता है, विशेषकर बाढ़ तथा वर्षा वाले क्षेत्रों में।

जीरो टिलेज बुआई यंत्र के अतिरिक्त एक और कृषि यंत्र का सफल प्रत्यक्षण भी इस केन्द्र द्वारा किया गया है। जिसे फिर्ब्स यंत्र कहते हैं। इस यंत्र द्वारा मेंड़ बनाकर उस पर बुवाई की जाती है। ये मेंड़ तीन वर्ष तक काम करती हैं। इस पद्धति द्वारा खेती करने पर सिंचाई उपयुक्त हो पाती है तथा उर्वरकों की बर्वादी भी कम से कम होती है।

अनुसंधान द्वारा नए प्रभेदों का विकास सतत् किया जा रहा है। अब प्रयास किए जा रहे हैं गेहूँ की उत्तम गुण वाली किस्मों के विकास का, जिसे विदेशों में निर्यात किया जा सके। अनुसंधान तथा बीज उत्पादन का यह कार्यक्रम नए–नए तकनीकों से चलता रहेगा, क्षेत्रीय स्टेशन, पूसा का यही प्रयास है।

गेहूँ के उन्नत प्रभेद एवं अनुशंसित सघन सस्य पद्धतियाँ

गेहूँ की अच्छी उपज के लिए विभिन्न परिस्थितियों के अनुकूल उन्नत प्रभेदों का चयन काफी महत्व रखता है। बिहार के लिए पिछले कुछ सालों से निम्न प्रभेदों को अनुशंसित किया गया है।

1. सिंचित अवस्था

(अ) समय पर बुआई के लिए (15 नवम्बर से 10 दिसम्बर तक)

क्र.सं.	प्रभेद	पहचान/अनुशंसा का वर्ष	तैयार होने की अवधि (दिनों में)	उपज क्षमता (क्विं./हे.)
1.	एच0डी0 2824 (पूर्व)	2004	130–135	50–55
2.	एच0डी0 2733 (वी0एस0एम0)	2001	130–135	55–60
4.	एच0पी0 1761 (जगदीश)	1997	125–130	42–45
5.	एच0पी0 1731 (राजलक्ष्मी)	1995	120–125	41–45
6.	एच0डी0 2967	2011	120–125	45–50

(ब) बिलम्ब से बुआई के लिए (10 दिसम्बर से 31 दिसम्बर तक)

क्र.सं.	प्रभेद	पहचान/अनुशंसा का वर्ष	तैयार होने की अवधि (दिनों में)	उपज क्षमता (क्विं./हे.)
1.	एच0डब्लू 2045 (कौशाम्भी)	2002	110–115	30–35
2.	एच0डी0 2643 (गंगा)	1997	105–110	35–40
3.	एच0पी0 1744 (राजेश्वरी)	1997	105–110	35–40
4.	एच0पी0 1633 (सोनाली)	1992	105–110	35–40
5.	एच0डी0 2985	2010	105–110	35–40

(स) अत्यधिक बिलम्ब से बुआई के लिए (25 दिसम्बर से 10 जनवरी तक)

क्र.सं.	प्रभेद	पहचान/अनुशंसा का वर्ष	तैयार होने की अवधि (दिनों में)	उपज क्षमता (क्विं./हे.)
1.	एच0डी0 2285	1984	85–90	20–22
2.	एच0डी0 2307	1985	85–90	20–22
3.	एच0डी0 2402		85–90	20–22
4.	डब्लू आर0 544	2003	85–90	25–30

2. असिंचित अवस्था

(क) समय पर बुआई के लिए (15 अक्टूबर से 10 नवम्बर तक)

क्र.सं.	प्रभेद	पहचान/अनुशंसा का वर्ष	तैयार होने की अवधि (दिनों में)	उपज क्षमता (क्विं./हे.)
1.	एच0पी0 1493		135–140	25–30
2.	एच0डी0 2888	2006	135–140	30–32

विभिन्न अवस्थाओं के उन्नत प्रभेदों का परिचय

(1) सिंचित अवस्था में समय पर बुआई (15 नवम्बर से 10 दिसम्बर तक)

इस अवस्था के लिए निम्नलिखित प्रभेदों का उपयोग हितकर होता है।

एच0डी0 2824 (पूर्वी) : यह प्रभेद वर्ष 2004 में खेती के लिए अनुशंसित की गयी है। इसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने विकसित किया है। इस प्रभेद में कल्ले पैदा करने की अपार क्षमता है। यह रतुआ अवरोधी होता है। इसकी बालियाँ सफेद होती है। इसके पौधे की औसत ऊँचाई 89 सें.मी. होती है। यह 130–135 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसके दाने पुष्ट, आकर्षक तथा चपाती के लिए उत्तम होते हैं। इसकी औसत उपज क्षमता 50–55 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। इसमें प्रोटीन की मात्रा 12.19 प्रतिशत होती है।

एच0डी0 2733 (बी.एस.एम.): यह किस्म वर्ष 2001 में खेती के लिए अनुशंसित की गयी है। इसे भी भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने विकसित किया है। इसमें भी बहुत कल्ले बनते हैं। इसकी औसत ऊँचाई 86 से.मी. होती है तथा बालियाँ सफेद होती हैं। यह किस्म 130–135 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसके दाने बहुत पुष्ट तथा आकर्षक होते हैं। इसकी चपाती उत्तम क्वालिटी की होती है। इसकी औसत उपज क्षमता 55–60 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। इसमें प्रोटीन की मात्रा 12.39 प्रतिशत होती है।

एच0पी0 1761 (जगदीश): यह किस्म वर्ष 1997 में खेती क लिये अनुशंसित किया गया है। इसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, पूसा में विकसित किया गया है। इसमें विदेशी जीन एल0आर0 9 होने के कारण यह रतुआ अवरोधी किस्म है। साथ ही इसमें पत्र–लाँछन रोग के प्रति सहिष्णुता भी है। इसकी बालियाँ सफेद तथा ऊँचाई 84–90 सें.मी. होती है। इसके दाने मध्यम आकार के पुष्ट तथा आकर्षक होते हैं तथा चपाती बहुत ही उत्तम क्वालिटी की होती है। यह 123–130 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज क्षमता 42–45 क्विंटल प्रति हेक्टेयर एवं दाने में प्रोटीन की मात्रा 11.75 प्रतिशत होती है।

एच0पी0 1731 (राजलक्ष्मी): इस किस्म को वर्ष 1994 में अनुशंसित किया गया है। इसे भी भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के क्षेत्रीय स्टेशन, पूसा ने विकसित किया है। इसकी बालियाँ सफेद होती हैं। इसकी औसत ऊँचाई 86 से.मी. होती है। यह करीब 119–125 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसके दाने मध्यम आकार के लम्बे एवं आकर्षक होते हैं। यह चपाती के लिए उपयुक्त किस्म है। इसकी औसत उपज क्षमता 41–45 क्विं./हे. है। इसमें प्रोटीन की मात्रा 11.4 प्रतिशत होती है।

एच0डी0 2967: यह गेहूँ का नया प्रभेद है जिसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने वर्ष 2011 में विमोचित किया है। यह एक रतुआ रोग अवरोधी किस्म है जिसकी ऊँचाई 90–95 से.मी. होती है। यह प्रभेद

135–140 दिनों में पककर तैयार हो जाती है तथा इसकी औसत उपज क्षमता 50–55 क्विं./हे. तक पायी गयी है।

(2) सिंचित अवस्था में बिलम्ब से बुआई के लिए (10 दिसम्बर से 31 दिसम्बर तक)

इस अवस्था के लिए निम्नलिखित प्रभेदों की बुआई करना श्रेयस्कर होगा :

एच0डब्लू 2045 (कौशाम्बी) : इस किस्म को वर्ष 2001 में खेती के लिए विकसित किया गया। इसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, वेलिंगटन (तमिलनाडु) ने विकसित किया है। इसमें विदेशी जीन एल0आर0 24 + एस0आर0 24 को समाविष्ट कराये जाने के कारण यह रतुआ अवरोधी किस्म हैं। इसमें पत्र–लाँछन रोग के प्रति भी सहिष्णुता है। इस किस्म की दूसरी विशेषता यह है कि इसमें अधिक ताप सहने की क्षमता (टर्मीनल हीट टोलरेन्स) है जिससे गर्म पछिया हवा के कारण इसके उपज में ह्रास कम होता है। इसकी बालियाँ सफेद एवं आकर्षक दिखती हैं। इसके पौधे 85–90 से.मी. तक ऊँचाई वाले होते हैं। इसके दाने लम्बे, पुष्ट, ठोस, चमकीले तथा आकर्षक होते हैं। चापाती, यू0पी0 262 की तरह सफेद, मुलायम एवं अच्छी होती है। यह 113–120 दिनों में पककर तैयार हो जाती हैं। इसकी औसत उपज क्षमता 35 क्विं./हे. है तथा इसमें प्रोटीन की मात्रा 13 प्रतिशत होती है।

एच0 पी0 1744 (राजेश्वरी): इस प्रभेद को वर्ष 1997 में खेती के लिए विकसित किया गया है। इसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, पूसा ने विकसित किया है। इसकी बालीयाँ सफेद होती हैं एवं पौधों की औसत ऊँचाई 85.5 से.मी. होती है। यह 103–110 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसके दाने बहुत ही पुष्ट, आकर्षक तथा चमकदार होते हैं। इसकी चपाती भी यू0 पी0 262 की तरह उतकृश्ट होती है। इसकी औसत उपज क्षमता 35 क्विं./हे. है। इसमें 14.9 प्रतिशत प्रोटीन होता है।

एच0डी0 2643 (गंगा): यह प्रभेद सीधा बढ़वार वाले गहरे हरे रंग के पत्तों से निहित हैं जिसकी बाली मोमयुक्त होती है। उसके पौधे औसतन 85 सें.मी. ऊँचाई रखते हैं तथा 10 दिन में तैयार होकर 35–40 क्विं/हे. तक उपज देते हैं। इसके दाने पुष्ट तथा कड़े प्रकृति के हैं जिसमें 13 प्रतिशत तक प्रोटीन पाया जाता है। इस प्रभेद में रतुआ रोग अवरोध तथा करनाल बन्ट एवं पत्र लांक्षण से सहिष्नुता के गुण पाये जाते हैं। इस प्रभेद को उत्तर–पूर्वी मैदानी क्षेत्र के लिए 1997 में अनुशंसित किया गया था।

एच0 पी0 1633 (सोनाली): यह प्रभेद भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, पूसा द्वारा वर्ष 1992 में विकसित किया गया है। भारत में सर्वप्रथम विदेशी जीन एल0आर0 9 समाविष्ट कराकर इस प्रभेद को निर्गत किया गया है यही कारण है कि यह किस्म रतुआ अवरोधी है तथा पत्र लाछँन के प्रति सहिष्णु भी है। इसकी बालियाँ भूरे रंग की होती है तथा पौधे की ऊँचाई 90–100 से.मी. होती है। यह 105–120 दिनों में पककर तैयार होती है। इसके दाने लम्बे, पुष्ट, आकर्षक तथा चमकदार होते हैं। इसकी उपज क्षमता 30–35 क्विं./हे. एवं दाने में प्रोटीन की मात्रा 14.2 प्रतिशत होती हैं।

एच0 डी0 2985: भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित यह प्रभेद सिंचित अवस्था में देर से बुआई के लिए वर्ष 2010 में अनुशंसित की गयी है। इसकी औसत ऊँचाई 80–85 से.मी. होती है तथा 105–110 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज क्षमता 40–42 क्विं./हे. है अतः देर से बुआई वाले प्रभेदों में ज्यादा उपज क्षमता के कारण इसे इस क्षेत्र के लिए अनुशंसित किया गया है।

सिंचित अवस्था में अत्यधिक बिलम्ब से बुआई के लिए (25 दिसम्बर से 10 जनवरी तक)

एच डी0 2285: अत्यधिक बिलम्ब से बुआई के लिए गेहूँ का यह प्रभेद भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली से 1984 में विकसित की गयी थी। इस प्रभेद के पौधे सीधे एवं मध्यम ऊँचाई के होते है तथा देर से बुआई करने के बाद भी 20 से 25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज देने की क्षमता रखतें हैं।

एच0 डी0 2307: भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली से ही अत्यधिक विलम्ब से बुआई के लिए 1985 में इस प्रभेद का चयन किया गया। इसकी उपज क्षमता देर से बुआई करने के बाद भी 22 से 25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक आंकी गयी है।

डब्लू आर0 544: भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा पछेती व अत्यन्त पछेती बुआई के लिये इस किस्म को 2003 में विमोचित किया गया। इसकी औसत उपज 30–35 किं0/हे0 है। यह गहन फसल चक्र में भी उगाने के लिये उपयुक्त है।

3. असिंचित अवस्था में समय पर बुआई के लिए (15 अक्टूबर से 10 नवम्बर तक)

बिहार में इस अवस्था में बुआई के लिए निम्नलिखित किस्मों का उपयोग करना लाभकारी होगा:

एच0 पी0 1493: यह भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, पूसा द्वारा विकसित किस्म है जो मुख्य रूप से बिहार के लिए अनुशंसित की गई है। इसकी बालियाँ सफेद होती है तथा लम्बाई 105–130 से.मी. होती है। यह 125–140 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसके दाने सफेद, पुष्ट, चमकीले तथा आकर्षक होते हैं। इसकी चपाती सी 306 की भाँति उतकृष्ट किस्म की होती है। इसकी उपज क्षमता 21–25 क्विं./हे. है।

एच0 डी0 2888: यह प्रभेद गेहूँ के असिंचित अवस्था में लगाने के लिए वर्ष 2006 में एन0ई0पी0 द्वारा अनुशंसित किया गया है। यह प्रभेद भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली से विकसित की गयी है। इस प्रभेद में सी 306 के गुणों का संकरण होने के कारण इसके दाने सुडौल तथा चमकदार होते हैं तथा रोटी बनाने के लिए काफी अच्छी है। इसकी उपज क्षमता 30–32 क्विं. प्रति हेक्टेयर तक है साथ ही अन्य बरानी प्रभेदों की तरह यह भी 135–140 दिन में पककर तैयार हो जाती है तथा इसके दानों में 10.3 प्रतिशत तक प्रोटीन भी पायी जाती है।

एच0डी0आर0 77: गेहूँ की बरानी खेती में देर से बुआई के लिए यह प्रभेद 1990 में अनुशंसित की गयी, जिसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने विकसित किया है। यह कम समय में पकने वाली (100 दिनों) प्रभेद है जिसकी ऊँचाई औसतन 75 से.मी. होती है तथा खेत में फसल गिरने के अवरोधी क्षमता से मुक्त है। इस प्रभेद में वरानी स्थिति में भी 25 क्विं./हे. उपज क्षमता है।

4. असिंचित अवस्था में देर से बुआई के लिए (11 नवम्बर से 20 नवम्बर तक)

इस अवस्था के लिए एच0 डी0 आर0 77 सबसे उपयुक्त प्रभेद है।

बीज दर एवं बुआई की दूरी: गेहूँ की बुआई के लिए बीज की दर एवं कतारों की दूरी का चयन बुआई की विधि तथा बुआई के समयानुसार निर्धारित करना चाहिए। बीज का आकार एवं सुडौलापन भी बीज की मात्रा को प्रभावित करता है। प्रायः सुडौल बीज वाले प्रभेद की बीज दर पतले दाने वाले प्रभेद से 10–15 प्रतिशत

ज्यादा रखना चाहिए। उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर ही बीज दर और बुआई की दूरी का निर्धारण निम्नलिखित रूप से किया जाता है:

अवस्था	बीज दर	कतारों की दूरी (सें.मी.)
समय से बुआई के लिए	100–125	22.5
देर से बुआई के लिए	125–150	15–18
बहुत देर से बुआई के लिए	150	15
जीरो टिलेज एवं सतही बुआई	150	

नई उन्नत किस्मों के गेहूँ की कोलियोप्टाइल की लम्बाई कम होती है, अतः इन किस्मों को 4–5 से.मी. से ज्यादा गहराई पर बोने के बाद अंकुरण प्रभावित होने का खतरा बन जाता है।

बुआई की विधि गेहूँ के बीज की बुआई प्रायः दो प्रकार से की जाती है:

1. छिटकवाँ विधिः इसमें खेत की तैयारी के बाद अन्तिम पाटा देने के पहले उचित मात्रा में बीज को खेत में हाथ से छींट कर पाटा चला दिया जाता है। इस विधि में कुछ बीज ऊपर ही रह जाते हैं। जिससे उसका अंकुरण प्रभावित होता है। अतः इस विधि में भी 20–25 प्रतिशत ज्यादा बीज का इस्तेमाल करना उचित माना जाता है।

2. ड्रील मशीनों द्वाराः इस विधि में आजकल कई तरह के ड्रील व्यवहार में लाये जाते हैं जैसेः

(i) **परम्पारिक मशीनों द्वाराः** इस मशीन से बीज की निर्धारित मात्रा खेत में निश्चित कतारों की दूरी एवं गहराई पर गिराई जाती है। कतारों में बीज गिरने से खरपतवार नियंत्रण में आसानी होती है।

(ii) **मेंड़ एवं नाली बनाने वाली मशीन एवं सीड ड्रील द्वाराः** यह एक अलग तरह का सीड ड्रील है जिसमें गेहूँ की बुआई मेड़ बनाकर उन मेंड़ों पर दो या तीन कतारों में की जाती है। इस विधि से बुआई करने में 25 प्रतिशत बीज, 25–30 प्रतिशत खाद एवं 20–25 प्रतिशत सिंचाई की बचत संभव हैं परन्तु याद रहे कि इस विधि में प्रयोग की जाने वाली प्रभेद वैसी होनी चाहिए जिसमें कल्ला देने की क्षमता ज्यादा हो।

(iii) **रोटावेटर कम सीड ड्रील द्वाराः** यह मशीन आजकल काफी उपयोगी सिद्ध हो रही है। इस मशीन के द्वारा खेत की तैयारी, बीज की बुआई, खाद डालने तथा पाटा लगाने का कार्य एक साथ सम्पन्न होता है। नीचे रोटावेटर खेत को तैयार करता है तथा इसी मशीन पर ऊपर लगे सीड ड्रील से उचित दूरी एवं गहराई पर एक ही साथ बीज एवं खाद कतारों में डालने के बाद पाटा लगाने का कार्य भी पूर्ण हो जाता है।

(iv) **जीरो टिंल ड्रील द्वाराः** इस मशीन से खेत को बिना जोते ही एक निश्चित दूरी एवं गहराई पर मिट्टी में बीज एवं उसके नीचे निश्चित मात्रा में खाद को डाला जाता है। देर से तैयार होने वाले धान के फसल के बाद या देर तक पानी के जमाव वाले खेतों में इस मशीन का उपयोग कर गेहूँ की खेती सुचारू रूप से की जा सकती है। इस मशीन के उपयोग से खेत की तैयारी करने का खर्च बच जाता है। साथ ही गेहूँ की पैदावार पर कोई फक्र नहीं पड़ता हैं इस विधि से गेहूँ की बुआई वैसी परिस्थितियों में भी की जाती है जब खेत में ज्यादा नमी के कारण पारम्परिक जुताई संभव नहीं है।

खाद एवं उर्वरकः अन्य फसलों की तरह ही गेहूँ की खेती में भी खाद एवं उर्वरक का काफी बड़ा योगदान होता है। वैसे तो खाद एवं उर्वरक की मात्रा का निर्धारण मिट्टी जाँच के आधार पर ही करना चाहिए परन्तु साधारण परिस्थिति में गेहूँ के लिए अनुशंसित खाद एवं उर्वरक की मात्रा निम्नलिखित हैः

अगर गोबर की सड़ी खाद उपलब्ध हो तो 100 क्वि/हे0 खेत की तैयारी के पहले खेत में छिटक कर खेत की तैयारी करें तथा निम्नलिखित खाद की मात्रा का प्रयोग करेंः

सिंचित अवस्था में समय से बुआई के लिए प्रति हेक्टेयर 120 कि0ग्रा0 नेत्रजन, 60 कि0ग्रा0 स्फुर (फॉस्फोरस), 30 किग्रा0 पोटाश।

सिंचित अवस्था में देर से बुआई के लिए प्रति हेक्टेयर 80–100 कि0 ग्रा0 नेत्रजन, 50 कि0ग्रा0 स्फुर।

असिंचित गेहूँ की खेती के लिए प्रति हेक्टेयर 50–60 कि0 ग्रा0 नेत्रजन, 20–30 कि0ग्रा0 स्फुर, 10–20 कि0ग्रा0 पोटाश।

खेत की अंतिम तैयारी के समय एक तिहाई नत्रजन की मात्रा तथा स्फुर और पोटाश की पूरी मात्रा मिट्टी में डालकर अच्छी तरह मिला दें तथा बचे हुए नत्रजन की आधी–आधी मात्रा पहले तथा तीसरे सिंचाई के समय खड़ी फसल में ऊपर से (टाप ड्रेसिंग) छिड़काव करें।

इसके अलावा जिन क्षेत्रों में जिंक, बोरॉन या अन्य सूक्ष्म तत्वों की कमी आ गयी हो उसमें आवश्यकतानुसार इन तत्वों को खेत की तैयारी के समय ही डालकर अच्छी तरह मिला दें जिससे कि खेत की उर्वरा शक्ति बनी रहे। जिंक की कमी के लिए 25 कि0ग्रा0 जिंक सल्फेट तथा बोरान की कमी के लिए 10 किग्रा0/हे0 बोरेक्स का व्यवहार किया जाना चाहिए।

सिंचाईः गेहूँ की फसल में सिंचाई की संख्या मिट्टी की संरचना तथा फसल के दौरान होने वाली वर्षा की मात्रा पर निर्भर करता है। साधारणतः बिहार के उत्तरी भाग में 3 से 5 सिंचाई की आवश्यकता होती है इन सिंचाईयों को पानी की उपलब्धता के आधार पर तथा फसल की माँग को देखते हुए निम्न रूप में व्यवस्थित करना ज्यादा फायदेमन्द हैः

हर समय पानी की पर्याप्त सुविधा रहने परः गेहूँ की बुआई के 20–25, 40–45, 60–65, 75–80, तथा 90–100 दिन बाद सिंचाई करें।

चार सिंचाई की सुविधा रहने परः गेहूँ की बुआई के 20–25, 40–45, 60–65 तथा 80–85 दिन बाद सिंचाई करें।

तीन सिंचाई की सुविधा रहने परः गेहूँ की बुआई के 20–25, 55–60 तथा 80–85 दिन बाद सिंचाई करें।

दो सिंचाई की सुविधा रहने परः गेहूँ की बुआई के 20–25 तथा 80–85 दिन बाद सिंचाई करें।

एक सिंचाई की सुविधा रहने परः गेहूँ की बुआई के 20–25 दिन बाद सिंचाई करें।

अगर सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध न हो और खेती प्राकृतिक वर्षा पर ही निर्भर हो तो गेहूँ की बरानी खेती के लिए अनुशंसित प्रभेद जैसे एच0 पी0 1493, एच0 डी0 आर0 77 ही लगायें।

खरपतवार नियंत्रणः प्रायः बिहार के गेहूँ के खेतों में भाँग, बथुआ, कटैया तथा गेहूँ के मामा (गुल्ली डण्डा) ही मुख्य खरपतवार के रूप में पाये जाते हैं। अब कुछ क्षेत्रों में पाली पोगन का प्रकोप भी देखा जा रहा है।

साधारणतया इनका नियंत्रण निकाई–गुड़ाई से किया जाता है और इसके लिए हस्त नियंत्रण "कसौला" तथा "खुरपी" का प्रयोग होता है। अब कुछ क्षेत्रों में इन खरपतवारों का प्रकोप बढ़ता जा रहा है तथा मजदूरों की कमी हो रही है। अतः निकाई–गुड़ाई से खरपतवारों के नियंत्रण में दिन ब दिन कठिनाई बढ़ती जा रही है। इस परिस्थिति में रासायनिक खरपतवार नियंत्रक दवाओं का उपयोग काफी लाभदायक सिद्ध हो रहा है। खरपतवार के प्रकार को देखते हुए उचित खरपतवारनाशी दवा का चुनाव, उसकी उचित मात्रा, व्यवहार का समय तथा व्यवहार की विधि खरपतवार के नियंत्रण मे अहम् भूमिका निभाती है। खरपतवार के प्रकोप का ठीक से अध्ययन कर निम्न खरपतवारनाशी दवा का व्यवहार करना चाहिए:

गेहूँ में खर पतवार नियंत्रण के लिए अनुसंशित शाकनाशी

खरपतवार नाशी	प्रयोगदर (ग्रा0 सक्रिय तत्व/हे0)	नियंत्रित खरपतवार	प्रयोग का समय
पेन्डिमेथलिन (स्टाम्प 30/50 ई0)	750–1000	चौड़ी पत्ती वाले तथा घास	फसल के बीज के जमने से पहले
टरब्यूट्राइन (इग्रान)	800–1000	चौड़ी पत्ती वाले तथा घास	फसल के बीज के जमने से पहले
आइसोप्रोटयूरान	1000	संकरी पत्ती वाले	जमने के पश्चात (बुआई के 25–30 दिन बाद)
सल्फोसल्फ्यूरान (लीडर)	25	चौडी पत्ती वाले तथा घास	जमने के पश्चात (बुआई के 25–30 दिन बाद)
क्लोडिनॉफाफ प्रोपर जाइल (टॉपिक)	60	संकरी पत्ती वाले	जमने के पश्चात (बुआई के 40–42 दिन बाद)
फिनाक्सीप्रॉप–पी–इथाईल (प्यूमा सुथर)	80–120	संकरी पत्ती वाले	जमने के पश्चात (बुआई के 40–42 दिन बाद)
बार्बन (कार्बाइन 12.5 ई0 सी0)	1000	संकरी पत्ती वाले	जमने के पश्चात (बुआई के 25–30 दिन बाद)
2–4 डी (सोडियम साल्ट) और एयाड्रन	750	चौड़ी पत्ती वाले	जमने के पश्चात (बुआई के 30–35 दिन बाद)
मेट सल्फयूरॉन मिथाइल (आल्ग्रिप)	4–6	चौडी पत्ती वाले एवं मोथा के लिए	जमने के पश्चात (बुआई के 25–30 दिन बाद)
अटलान्टिस 3.6 डब्लू.डी. जी. (12 ग्राम भीजोसलफ्यूरान + 2.4 ग्राम आइड्रोसल्फ्यूरान + सेफ्नर)	12+2.4	सभी के लिए	जमने के पश्चात (बुआई के 25–30 दिन बाद)
टोटल 80 डब्लू0 डी0 जी0 (सल्फोसल्फ्यूरान + भीजो सल्फ्यूरान)	30+2	सभी के लिए	जमने के पश्चात (बुआई के 25–30 दिन बाद)
आइसोप्रोटयूरान + 2.4 डी.	750+250	सभी के लिए	जमने के पश्चात (बुआई के 25–30 दिन बाद)
सल्फोसल्फ्यूरान + मेटासल्फ्यूरान	20+4	सभी के लिए	जमने के पश्चात (बुआई के 25–30 दिन बाद)

उपरोक्त खरपतवार नाशियों की उपयुक्त मात्रा को 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

कटनी एवं दौनी: गेहूँ के बालियों में दानों के पक पर ये सूख कर नीचे की तरफ मुड़ जाती है। अतः फसल की तुरत कटाई करें। फसल ज्यादा खालिहान में दो–तीन दिन सूखाने के बाद थ्रेशर से फसल की गहाई या दौनी कर लें। इसके बाद भंडारण के समय दानों को सुखा कर उसमें उचित नमी (10:) ही रहने दें, नही तो अंकुरण प्रभावित होने की संभावना बनी रहती है। भण्डारण के लिए वैसी ही जगह का चुनाव व्यवस्था करें जहाँ नमी तथा कीड़ों का प्रकोप न हो।

लीची विकास हेतु नई तकनीकें

विशाल नाथ, एस.के. पूर्वे, राजेश कुमार, एस.डी. पाण्डेय, अमरेन्द्र कुमार एवं विनोद कुमार

राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केन्द्र, मुजफ्फरपुर, बिहार

सत्रहवीं सदी में भारत आगमन के बाद विगत वर्षों में लीची के क्षेत्रफल एवं उत्पादकता में काफी वृद्धि हुई है। हमारे देश में लीची के अन्तर्गत कुल क्षेत्रफल 83,000 हे. एवं उत्पादन 536.00 मेट्रिक टन है। खासकर, राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केन्द्र की 2001 में स्थापना के बाद पिछले दो दशको से लीची के गुणवत्तायुक्त उत्पादन एवं क्षेत्रफल में वृद्धि हुई है। शोध संस्थान उत्पादन एवं तुड़ाई उपरान्त विभिन्न पहलुओं पर सतत अनुसंधान करता आ रहा है, जिसके परिणाम स्वरूप कुछ किसान/उद्यमी उपयोगी तकनीकों का विकास हुआ है। इनमें जननद्रव्यों का संग्रह, अध्ययन, किस्म सुधार, मधुमक्खी का लीची उत्पादन में सहभागिता, नई पौध प्रवर्द्धन तकनीकि, छत्रक प्रबंधन, पुराने बागो का जीर्णोद्धार, अन्तर्वर्ती फसले, फलों का दैहिक विकारों से रोकथाम,

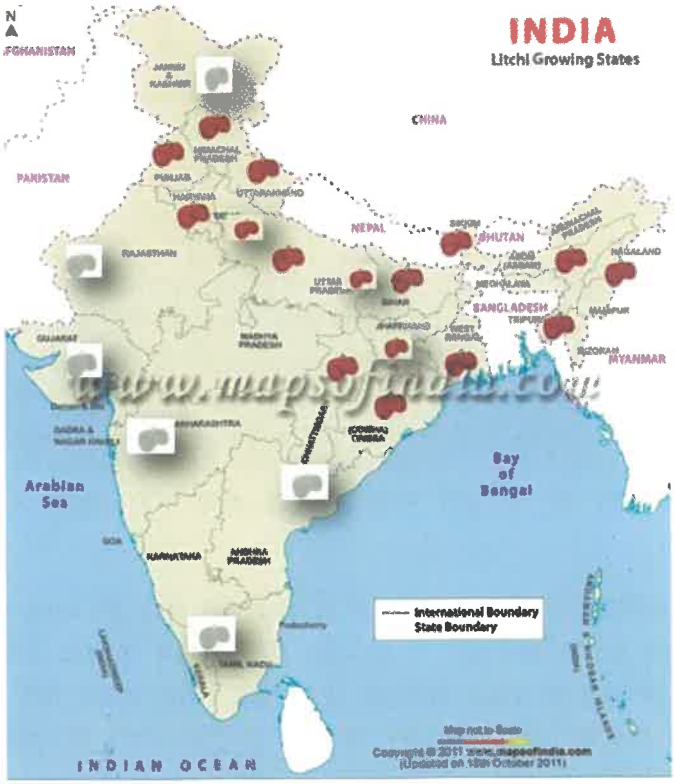

भारतवर्ष में लीची उत्पादन क्षेत्र

परिपक्वता मानकों का मानकीकरण, तुड़ाई उपरान्त ह्रास रोकने हेतु प्रबंधन एवं मूल्यवर्द्धित पदार्थ आदि तकनीकों का विकास प्रमुख है।

लीची आधारित फसल पद्धति मॉडल

1. **तकनीक का विवरण:** नये लगाये गये लीची के बागों में 5 वर्ष तक पौधों के बढ़ने के साथ घटते क्रम में लगभग 80 प्रतिशत क्षेत्रफल पौधों के बीच खाली रहता है। लीची आधारित फसल पद्धति मॉडल का उद्देष्य पौधों के बीच के खाली स्थान को कम दिन वाली फसलों को लगाकर उपयोग करना –जिनका कि पौधों की वृद्धि एवं जड़ों की वृद्धि पर अनुकूल प्रभाव हो। फसल के दो मॉडल बलुई दोमट मिट्टी के लिए इस प्रकार हैं।

   मॉडल–I: लीची+2पंक्ति केला (एक मुख्य+पेड़ी की फसल)

   मॉडल–II: लीची+नगदी फसल (80 प्रतिशत खाली स्थान के लिए)
   (फसल क्रमय भिण्डी–ग्लेडियोलसय लोबिया–आलूय प्याजय लोबिया–फ्रेचबीन–भिण्डी)

2. **उपयोगी क्षेत्र:** लीची उत्पादन लीची के नए बागानों से आय बढ़ाना एवं भूमि स्वास्थय प्रबंधन।

3. **विधि:** फ्लो चार्ट में दिया गया है।

मॉडल–I	**मॉडल–II**
भूमि तैयार करना ↓ केला लगाने के लिए गड्ढ़े तैयार करना। ↓ गोबर खाद, मिट्टी, नीम की खल्ली के मिश्रण से गड्ढ़े की भराई ↓ केले के पौधों को लगना ↓ घौर (घोद) की कटाई ↓ पेड़ी फसल का प्रबंधन	भूमि तैयार करना ↓ लीची पौधों के लिए स्ट्रिप तैयार करना ↓ खाली स्थान में फसल की बुआई ↓ फसल प्रबंधन ↓ फसल की कटाई पूर्णतः पकने की दशा में करना

4. **यंत्र एवं अन्य संसाधन की आवश्यकता** : केले का पौधा, फसल का बीज, खाद एवं उर्वरक, स्प्रेयर, कीटनाशी एवं फफूंद नाशी दवाएं एवं प्रक्षेत्र कृषि यंत्र।

5. **तकनीक का अनुमानित लगात**

   1. मॉडल–I: मॉडल–I रु. 25000 मुख्य फसल के लिए एवं रु. 12000 प्रत्येक पेड़ी फसल के लिए (लागतः लाभ अनुपात–1:5.1)

   2.मॉडल–II: लगभग रु. 20,000 (लागतः लाभ अनुपात–1:4.0)

6. **तकनीक के अपनाने में जोखिम एवं संभावनाएं:** कोई खतरा नहीं, केवल लीची के बाग की तुलना में फसल लगाकर अतिरिक्त आय प्राप्त करना। लीची की फसल पर अन्तरषस्य फसलों का कोई बुरा असर नहीं।

7. **परिणाम**

(अ) मॉडल–I: लीची–केला: 3 वर्ष तक लीची के बागान के लिए बहुत अच्छा मॉडल है। केला की मुख्य फसल से 36 टन, पेड़ी (प्रथम) 1 से 28 टन एवं द्वितीय पेड़ी फसल से 18.2 टन उत्पादन प्राप्त होता है।

(ब) मॉडल–II: भिण्डी–ग्लेडियोलस: अच्छी आय एवं लीची के नए पौधों की अच्छी विकास के लिए सबसे अच्छा फसल चक्र इससे रु. 1,42,694 का शुद्ध लाभ प्राप्त होता है। इसके बाद लोबिया–आलू–प्याज–फसल चक्र से रु. 93,180 एवं लोबिया–फ्रेंच बीन–भिण्डी से रु. 43,668 की शुद्ध आय प्राप्त होती है एवं लीची के पौधों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

गुणवत्ता हेतु लीची के गुच्छों का थैलीकरण

1. **तकनीक का विवरण:** बिहार में लीची की परिपक्वता उच्च तापमान एवं न्युन्तम आर्द्रता (अप्रैल–जून) के समय होती है। जिसके चलते फल फटना, झुलसना और अंततः फल के गुणवत्ता में समान रूप से ह्रास होती है। फल के गुच्छे का थैली में रखने की तकनीक, जिसके लिए छिद्रयुक्त उजला बटर पेपर (मक्खन सहित कागज) या भूरा पेपर बैग का प्रयोग फल के विकास अवस्था में किया जाता है। थैले के प्रयोग करने से रंग में सुधार, गुणवत्तापूर्ण मानक फलों की उपलब्धता तथा फल फटन, झुलसन एवं फल बेधक कीट का प्रकोप कम पाया गया।

2. **उपयोगिता क्षेत्रः** गुणवत्तापूर्ण लीची उत्पादन।

3. **विधिः** 20 प्रतिशत छिद्रता वाले उजला वटर पेपर (मक्खन पेपर) बैग या भूरा पेपर बैंग से फल लगने के 35–40 दिन बाद फल के गुच्छो को ढकें। बैग का दूसरा छोर खुला रखें। जब भी फटे या भींगे बैग को देखें उसे उसी दिन बदल दें।

4. **यंत्र एवं संसाधन की आवश्यकताः** फल के गुच्छे के अनुरूप उजला वटर पेपर बैग, सीढ़ी, जूट की रस्सी/सुतली आदि।

5. **तकनीक के क्रियान्यवन हेतु अनुमानित लागतः** रु. 3/ वैगिंग (20–25 फल वाले गुच्छों का) थैले वाले फल की कीमत 20–25 रु. प्रति किलो ज्यादा मिलती है।

6. **तकनीक के अपनाने में जोखिम एवं संभावनाएंः** कोई जोखिम नहीं, केवल तेज हवा एवं वर्षा से बचाने की जरूरत। आवश्यकतानुसार पौध सुरक्षा तत्वों का प्रयोग। पेड़ के ऊपरी भाग के फलों को वैगिंग में कठिनाई।

7. **परिणामः** ढके गुच्छों की गुणवत्ता बिना ढके फल के गुच्छों की अपेक्षा अच्छी पायी गयी।

- थैली वाले फल में 10–20 प्रतिशत फटे एवं चित्तिदार फल पाये गये। जब कि बिना थैली वाले फल में 40–50 प्रतिशत तक फटन एव जलन का प्रकोप पाया गया।
- थैली वाले फलों के गुच्छों में 30 प्रतिशत उच्च श्रेणी वर्ग के फल पाये गये।

लीची फल बेधको का जीवनाशी आधारित प्रबंधन

1. **तकनीक का विवरणः** फल एवं बीज बेधक लीची का एक प्रमुख नाशीकीट है। अकेले कोनोपोमोर्फा की 2–3 प्रजातियां लीची फल को काफी नुकसान पहुचांती है। नुकसान की महत्ता को देखते हुए यह तकनीक जीवनाशी एवं कुछ पौधों के उत्पाद द्वारा विकसित की गयी है एवं फल बेधक कीट के लिए उपयोगी पायी गयी है।
2. **प्रयोग क्षेत्रः** पौध स्वास्थय प्रबन्ध एवं स्वास्थय तथा रसायन मुक्त स्वास्थ फलों का उत्पादन।
3. **विधिः** विधि को तालिका में दिया गया है।
4. **आवश्यक सामग्री एवं यंत्रः** ट्राईकोकार्ड, कामधेनू जीवनाशी नियंत्रक, नीम का तेल, नीम आधारित व्यावसायिक जीवनाशी, फीरोमोन ट्रैप एवं आकर्षक, बास या लोहे के खम्भें।

तरीका

फेरोमोन ट्रैप (12–15/ट्रैप/है.) के बगीचे में बाग के मध्य ऊचाई (10–15 फीट) पर जनवरी के प्रथम स्पताह में लगाना चाहिये। आकर्षक (लूर) हो प्रति 25 वे दिन बदल देना चाहिए।

↓

ट्राईकोगामा कीटनाशी के 50,000 अण्डों को ट्राईकोकार्ड की सहायता से बाग में मंजर/फूल निकलने के पहले लगावें

↓

कामधेनू कीट नियंत्रक (5 प्रतिषत) या वर्मीवास (5 प्रतिशत) + नीम तेल (4 मिली/ली नीम आधारित रसायन का प्रयोग) (आजडिरेक्टीन संरचना) उत्पादक द्वारा निर्देशित मात्रा का प्रयोग फल लगने के तुरंत बाद करना चाहिए।

↓

उपरोक्त छिड़काव दो बार फल पकने के 15 दिन पहले सप्ताहिक अंतराल पर करना चाहिए (प्रजाति के अनुसार अप्रैल का अन्तिम सप्ताह एवं मई का प्रथम स्पताह)

5. **तकनीक की अनुमानित लागतः** लगभग रु. 9600 हे./ छिड़काव जबकि 6000/हें. फेरोमोन ट्रैप एवं आकर्षक के लिए खर्च करने पड़ेगें।

6. **तकनीक अपनाने में जोखिम एवं सम्भावनाएं:** तकनीक का प्रयार्वरण एवं जीव जन्तुओ पर कोई विपरित प्रभाव नहीं पड़ेगा एवं तकनीक के माध्यम से हम परभक्षी एवं परपोषी कीटो का संरक्षण करके उसकी संख्या बढ़ा सकते हैं। स्वास्थ एवं रसायनयुक्त फल उत्पादन में सहायक।

7. **परिणामः** तकनीक एकीकृत नाशीजीव प्रबन्ध के सिद्धान्तों की पूरी उत्तरदायी है। परन्तु कुछ और फल बेधक कीटों के लिए फेरोमोन संशलेशन की आवश्यकता है।

लीची जूस से वाइन का उत्पादन

1. **पदार्थ का विवरणः** लीची वाइन लाल चमकीला, लीची के खुशबू से सुगंधित है। इसका स्वादिय गुणत्ता अंगुर से बने वाइन के करीब एवं खुशबू बेहतर पाया गया। इसमें प्राकृतिक एंटी ऑक्सीटेंट (एंथेसाइनिन) एवं 10–12 प्रतिशत अल्कोहल है।

2. **उपयोगिता क्षेत्रः** तुड़ाई उपरांत प्रबंधन एवं मूल्यवर्द्धन हेतु।

3. **विधिः** निम्न तालिका में दर्शयी गई है।

4. **मशीनों एवं संसाधनों की आवश्यकताः** लीची का फल इस्ट, साइट्रिक अम्ल, चीनी संरंक्षित एवं सफाई करने वाले पदार्थ, पी.एच. मीटर, रिफ्रेक्टोमीटर, एस.एस.टैंक, पल्पर, फिल्ट्रेशन यूनिट, पैकिंग यूनिट आदि।

5. **तकनीक के क्रियान्वयन में अनुमानित लागत**

   (क) यूनिट स्थापना खर्चः रु. 10.00 लाख (1000 लीटर क्षमता) या रु. 1.0 करोड़ (1.0 लीटर क्षमता)

   (ख) उत्पादन खर्चः रु. 120/750 मी.ली. यद्यपि वाइन उत्पादन का खर्च यूनिट के लागत खर्च, कच्चे सौदे की गुणवत्ता और अन्य उत्पादन संबंधित वस्तुओं पर निर्भर करता है। वाइन चखने वाले (वाइन टेस्टर) भी अच्छी खासी रकम लेता है।

6. **तकनीक अपनाने में जोखिम/अवसरः** कच्चे माल (लीची फल) की सुनिशिचत मात्रा की आपूर्ति साथ ही साथ हितकारी वाइन नीति। भूरापन फटना एवं जलन के चलते काफी लीची के फल वर्वाद हो जाते है, जिसका उपयोग वाइन बनाने में (कम लागत में) किया जा सकता है।

तरीका

फलो का चयन
↓
जूस निकालना (जीवाणु मुक्त/रहित)
↓
वाइन इस्ट/जीवाणु का मिश्रण
↓
छानना एवं रैकिंग
↓
जमाना एवं छानना
↓
पकाना (एजिंग)
↓
पैकिंग
↓
लेवेलिंग

7. **परिणामः** अच्छी गुणवत्ता स्वाद एवं स्वादिय तौर पर स्वीकृत लीची वाइन होता है।

लीची के अनुत्पादित बागों का जीर्णोद्धार

1. **तकनीक का विवरणः** पुराने अनुत्पादित लीची के पेड़ों की वांछित कटाई–छटाई कर के नए कल्लों का सृजन करना एवं अन्य प्रक्रियाओं को अपनाकर बेहतर गुणवत्तापूर्ण लीची उत्पादन किया जा सकता है।
2. **उपयोगिता क्षेत्रः** जीर्णोद्धार पुराने अनुत्पादित लीची के पेड़/बगान
3. **विधिः** जीर्णोद्धार तकनीकी की विभिन्न प्रक्रिया निम्नवत किए जा सकते हैं।

पुराने अनुत्पादित वृक्ष/पेड़ों का चयन
↓
वृक्षों की कटाई (2.0–2.5 मी. की ऊचाई से, अगस्त–सितम्बर माह में)
↓
कटे भाग पर फफूंदनाशक दवा का लेप (कॉपर फफूंदनाशक का पेस्ट)
↓
खाद एवं उर्वरक डालना (मानसून के शुरूआत में)
↓
सघन कल्लों का वांछित विरलीकरण एवं छत्रक विकास
↓
अन्तवर्ती फसले
↓
समसामयिक सिंचाई एवं कीट–व्याधि प्रबंधन

4. **यंत्र एवं अन्य संसाधन की आवश्यकता:** मशीनचालित प्रुनिंग शॉ, टेलीस्कोपिक प्रुनर, सीकेटियर, फफुंदनाशक, खाद उर्वरक आदि।

5. **तकनीक क्रियान्वयन पर अनुमानित लागत: रु.** 25,000/है./वर्ष

6. **तकनीक अपनाने में जोखिम एवं संभावनाएं:** अवैज्ञानिक एवं असमय पर जीर्णोद्धार करने पर काटे गए वृक्षों के सुखने का भय बढ़ जाता है। पुराने बागों को हटाकर नए बाग लगाना एक दीर्घकालीन एवं खर्चीला प्रक्रिया होगा जबकि जीर्णोद्धार तकनीकी अपनाकर कम समय (4–5 साल में) एवं खर्च में गुणवत्तायुक्त उत्पादन किया जा सकता है।

7. **परिणाम**

- गुणवत्तापूर्ण लीची उत्पादन जीर्णोद्धार (प्रक्रिया के तीसरे साल बाद ही शुरू हो जाती है जो कि पूर्ण विकिसति अवस्था में 80–100 कि.ग्रा./पेड़ पाया जा सकता है।
- कटाई के बाद निकले लकड़ी शाखाओं को बेचकर बागावान अतिरिक्त आया प्राप्त कर सकता है।
- जीर्णोद्धार पश्चात बगीचे की खाली भाग में मौसमानुसार अन्तर्वितीय फसल लेकर अतिरिक्त लाभ कमाया जा सकता है।
- उच्च वर्गीय गुणवत्तायुक्त फल उत्पादन में बढ़ोत्तरी।

बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर द्वारा पूर्वी मैदानी क्षेत्रों के किसानों हेतु किसान हितैषी तकनीकों का विकास एवं विस्तार

आर.के. सोहाने

निदेशक, प्रसार शिक्षा, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर, बिहार

बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर की स्थापना बिहार राज्य में दूसरे कृषि विश्वविद्यालय के रूप में तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री नीतीष कुमार की पहल से 5 अगस्त सन् 2010 में की गई। इन्द्रधनुशी कांति को लक्षित कर हाल ही में सृजित बिहार कृषि विश्वविद्यालय का मुख्य परिसर सबौर में अवस्थित है। इस विश्वविद्यालय के सात अंगीभूत महाविद्यालय है जिनमें 4 फसल विज्ञान, एक उद्यान विज्ञान, एक पशु चिकित्सा एवं एक डेयरी विज्ञान के हैं। इन महाविद्यालयों के अलावा इस विश्वविद्यालय में 13 अनुसंधान केन्द्र है जो बिहार के 3 कृषि पारिस्थितिकी क्षेत्र में फैले हुए हैं। इस विश्वविद्यालय के अन्तर्गत 20 कृषि विज्ञान केन्द्र हैं जो विश्वविद्यालय के 20 अधिकृत जिले में अवस्थित है।

बिहार कृषि विश्वविद्यालय का मुख्य उद्देश्य राज्य में रहने वाले लोग, विशेष रूप से किसानों की जो राज्य के दो तिहाई जनसंख्या से अधिक हैं, के जीवन में गुणात्मक सुधार लाना है। समाज को बड़े पैमाने पर लाभान्वित करना अपना अंतिम लक्ष्य निर्धारित कर यह विश्वविद्यालय विश्वस्तरीय जरूरत आधारित कृषि शिक्षा, अनुंसधान, प्रसार एवं प्रशिक्षण के माध्यम से समाज को लाभान्वित कर रहा है।

इस विश्वविद्यालय के पारस्परिक समर्थित अधिदेश कृषि शिक्षा, अनुसंधान, प्रसार एवं प्रशिक्षण के क्षेत्र में निम्नलिखित हैं

शिक्षाः उपयुक्त गुणवत्तापूर्ण प्रशिक्षित मानव संसाधनों का विकास कृषि एवं संबंध क्षेत्रों में व्यवसायिक कार्यक्रमों के माध्यम से करना।

अनुसंधानः कृषि क्षेत्रों में वर्तमान एवं भविष्य के समस्याओं का समाधान प्रौद्योगिकियों को प्राप्त कर एवं शोधन करने के अलावा बुनियादी, अनुकुल एवं उपयुक्त अनुसंधान में पारस्परिक रूप से मजबूती प्रदान करने का दायित्व लेना।

प्रसारः प्रभावी रूप से प्रौद्योगिकियों का हस्तांतरण सुनिश्चित करना, अपने जीवंत विस्तार सेवा द्वारा प्रौद्योगिकियों का अंगीकरण में सहायता प्रदान करना जो कि लक्षित समूहों की सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों के अनुरूप होने के साथ–साथ कृषि पारिस्थितिकी की जरूरी सुरक्षा भी प्रदान करता हो।

प्रशिक्षणः पेशेवर विस्तारकर्मी, पैरा–पेशेवर विस्तार कर्मी का क्षमता सम्वर्धन करना।

बिहार कृषि विश्वविद्यालय द्वारा किसानोपयोगी प्रौद्योगिकियों का हस्तांतरण

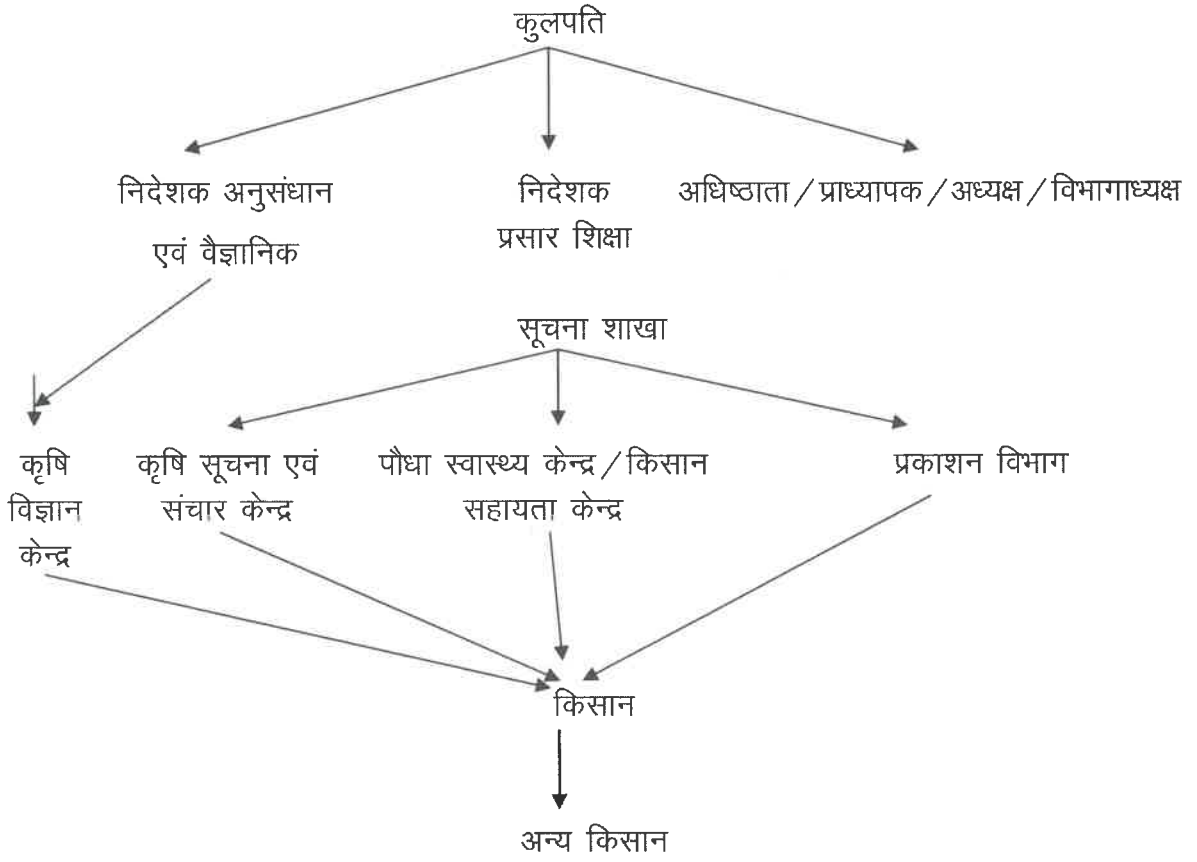

बिहार कृषि विश्वविद्यालय के प्रचार एवं प्रसार कार्यक्रमः बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर पूर्वी मैदानी क्षेत्रों के किसानों हेतु किसानोपयोगी तकनीकों का विकास एवं विस्तार में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है। यह विश्वविद्यालय समय–समय पर पेशेवर अधिकारियों, कर्मचारियों तथा प्रसार कर्मियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करती है। कृषकों, कृषक महिलाओं, पशुपालकों, बेरोजगारों तथा स्कूल छोड़े नवयुवकों को व्यवसायिक प्रशिक्षण देकर उन्हें आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर करता है। वैज्ञानिकों द्वारा विकसित नवीनतम तकनीकों को किसानों की सहभागिता से मूल्यांकित एवं परिमार्जित कर अग्रीम पंक्ति प्रत्यक्षण का आयोजन करता है। विश्वविद्यालय द्वारा विकसित तकनीकों को प्रदेश के किसानों के बीच प्रचारित एवं प्रसारित करने के लिए समुचित माध्यम यथा प्रकाशन, मेला, प्रदर्शनी, किसान गोष्ठी, दृश्य एवं श्रव्य तकनीकों को उपलब्ध करती है।

कृषि विज्ञान केन्द्रः विश्वविद्यालय अपने अधीन 20 कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से कृषकों, ग्रामीण नवयुवकों एवं महिलाओं को व्यवसायिक प्रशिक्षण के साथ–साथ उनमें उद्यमिता का विकास, स्वयं सहायता समूह का निर्माण किसान सहभागिता को सुनिश्चित करते हुए प्रसार सेवा प्रदान कर रहा है।

किसान चौपालः कृषि विश्वविद्यालय के अंगीभूत सभी महाविद्यालय एवं कृषि विज्ञान केन्द्र प्रत्येक शनिवार को पूर्व निर्धारित गाँव में किसान चौपाल का आयोजन करती है जिसमें कृषकों को कृषि संबंधी तकनीक तथा कृषि एवं संबंध क्षेत्रों की समस्याओं का उचित समाधान उनके गाँवों में ही दी जा सके। पिछले 3 वर्षों में चौपाल के माध्यम से करीब 5 लाख किसानों को लाभान्वित किया गया है।

तकनीकी सप्ताहः बिहार कृषि विश्वविद्यालय अपने अधीनस्थ सभी कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से प्रति वर्ष एक बार तकनीकी सप्ताह का आयोजन करती है जिसमें कृषकों को विश्वविद्यालय द्वारा विकसित उन्नत तकनीक, कृषि, मत्सय, गव्य विकास एवं पशुपालन से संबंधित तकनीकों की जानकारी दी जाती है साथ–साथ प्रदर्शनी भी आयोजित करती है।

किसान हेल्प लाइनः कृषि संबंधित समस्याओं का बिहार कृषि विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों/विषेशज्ञों द्वारा समाधान किसान हेल्प लाइन 0641–2451035 एवं टॉल फ्री नं0 18003456455 के माध्यम से किया जाता है। साथ ही Email : farmershelplinebausabour@gmail.com के माध्यम से कृषकों की समस्याएँ हल की जा रही है।

फसल प्रसंस्करण प्रौद्योगिकीः फसल भंडारण क्षय को ह्रास कर उनका मूल्य संवर्धन करने की दिशा में इस विश्वविद्यालय में प्रौद्योगिकियों का विकास किया जा रहा है। इसके अन्तर्गत आने वाले मुख्य फसल है जैसे कच्चे एवं पके आम, अमरूद, लीची तथा अन्य फसल, सब्जियों के उत्पादों, मांस आदि शामिल है। फसलों के गुणवत्ता पूर्वक भंडारण तकनीक पर भी अनुसंधान किये जा रहे हैं।

कृषि मौसम सलाहकार सेवाः मौसम से संबंधित पूर्वानुमान के आधार पर कृषि मौसम से संबंधित बुलेटिन तैयार कर सप्ताह में दो दिन मंगलवार एवं शुक्रवार को विभिन्न समाचार पत्रों, विभिन्न स्वयं सेवी संस्थाओं तथा आकाशवाणी, भागलपुर से प्रकाशित एवं प्रसारित कराया जाता है। इसके साथ–साथ मौसम विभाग, पुणे के वेबसाइट पर भी लोड किया जाता है। मौसम पर आधारित किसानों के लिए सामयिक सलाह समय–समय पर दी जाती है। इस विश्वविद्यालय द्वारा भी मध्यम अवधि के बुलेटिन तैयार किये जाते हैं जिसका अनुमान 85 प्रतिशत से अधिक सत्य रहता है।

विश्वविद्यालय द्वारा किसानोपयोगी प्रकाशनः विश्वविद्यालय किसानोनुकूल बहुत सारी पत्रिकाएँ प्रकाशित करती हैं जिनमें मुख्य हैं– कृषक संदेश (त्रैमासिक), किसान समाचार (त्रैमासिक), बिहार किसान गाइड (पॉकेट डायरी), कृषि की कहावतें, कृषि उद्यमिता विकास के बढ़ते कदम, उद्यान प्रशिक्षक, मशरूम उत्पादन, केंचुआ खाद उत्पादन तकनीक, मधुमक्खी पालन जिनमें इस विश्वविद्यालय के नित्य नये शोधों को निरंतर प्रकाशित किये जाते हैं। इन प्रकाशनों के अलावा विश्वविद्यालय के अधीनस्थ सभी कृषि विज्ञान केन्द्र कृषक समाचार (त्रैमासिक) प्रकाशित कर किसानों को नई तकनीकों से रूबरू कराते रहते हैं। विश्वविद्यालय द्वारा प्रत्येक वर्ष प्रकाशित की जाने वाली ''बिहार किसान डायरी'' किसानों के बीच काफी लोकप्रिय है। विश्वविद्यालय की गतिविधियों को जन–जन तक पहुँचाने के लिए प्रत्येक सप्ताह ई–मेल "Happening BAU" (अंग्रेजी में) तथा ''बी.ए.यू. एक नजर'' (हिन्दी) का प्रकाशन नियमित किया जा रहा है।

कृषि प्रसार में संचार एवं सूचना तकनीक

किसान ज्ञान रथ – विश्वविद्यालय ने कृषि के नवीनतम तकनीकों को किसानों के द्वार तक पहुँचानें के लिए किसान ज्ञान रथ (मोबाईल वैन) की सेवा प्रारंभ कर दी गई है। इस हाइटेक वैन में मिट्टी जाँच प्रयोगशाला, तकनीक आधारित एवं सफल किसानों की फिल्में दिखाने के तकनीक से लैस है। साथ ही इसमें वैज्ञानिकों की टीम साथ–साथ चलती है जो किसानों की समस्याओं का त्वरित निष्पादन करती है।

विडियो कान्फ्रेंनसिंग – मुख्यालय सहित सभी कृषि विज्ञान केन्द्रों को विडियों कान्फेंनसिंग से जोड़ा गया है जिसके तहत मुख्यालय के वरीय वैज्ञानिकों के द्वारा दूर–दराज में बैठे किसान नियमित प्रशिक्षण लेते है साथ

ही किसानों के किसानी से जुड़े किसी भी समस्या का समाधान त्वरित किया जाता है। इतना ही नहीं इस हाइटेक तकनीक के माध्यम से बी.ए.यू. मुख्यालय अपने सभी के.वी.के की मोनीटिरींग भी त्वरित करता है।

तकनीकी वृतचित्र का निर्माण – प्रसार अन्तर्गत मिडिया सेन्टर के माध्यम से तकनीकी वृतचित्र का निर्माण कराया जाता है जिसे किसानों के बीच दिखाकर उनके तकनीकी ज्ञान को बढ़ाया जाता है।

विश्वविद्यालय द्वारा विकसित प्रभेद

गेहूँ का प्रभेद

सबौर श्रेष्ठ – विलम्ब से बुआई के लिए यह प्रभेद ज्यादा उपयुक्त है। इसमें पछुआ हवा को बरदाश्त करने की क्षमता ज्यादा है। यह बिहार की जलवायु के लिए उपयुक्त प्रभेद है।

सबौर समृद्धि – इस प्रभेद में बीमारी एवं कीट का प्रक्रोप बहुत ही कम होता है। ऐसे किसान जिनकी मिट्टी में कीट प्रक्रोप के कारण गेहूँ की फसल बर्बाद हो जाता है, उनके लिए यह प्रभेद मील का पत्थर होगा।

सबौर निर्जल – बी.ए.यू., सबौर द्वारा विकसित गेहूँ का यह प्रभेद बिहार के किसानों के लिए वरदान साबित होगा। इस प्रभेद को बगैर सिंचाई के सिर्फ मिट्टी के नमी से उत्पादित किया जा सकता है। साथ ही इसे सिंचाई के साथ भी उत्पादन लिया जा सकता है। जलवायु परिवर्त्तन को दृष्टिगत रखते हुए इसे विश्वविद्यालय अनुसंधान में इसे प्रमुखता दी गई है।

धान का प्रभेद

सबौर सुरभित – सुगंधित धान का सबौर सुरभित प्रभेद अति बारीक एवं आगात, जल्द तैयार होने वाला फसल है। इसे कम पानी में भी उत्पादित किया जा सकता है।

सबौर अर्द्धजल – विश्वविद्यालय द्वारा विकसित की गई एरोबिक धान की यह प्रभेद राज्य के कम वर्षा वाले क्षेत्रों, मध्यम एवं ऊँची जमीन पर सीधी बुआई के लिए उपयुक्त है। इसका उत्पादन लागत कम होने के साथ–साथ हमारे पर्यावरण के लिए भी अनुकूल है।

सबौर श्री – धान की उन्नतशील प्रजाति हरियाणा, बासमती एवं मंसूरी के क्रास से बनाया गया है। यह सिंचित अवस्था में मध्यम जमीन के लिए उपयुक्त है।

मक्का

मक्का डी.एच.एम. 117 – जल जमाव एवं कम पानी में उत्पादित किया जा सकता है। मध्यम अवधि में तैयार होने की वजह से पौधा हरा होता है जिसका उपयोग चारा में भी किया जा सकता है।

सबौर शंकर मक्का 1 – कम समय में खरीफ तथा बसंत काल के लिए उपयुक्त है।

सबौर शंकर मक्का 2 – यह प्रभेद उच्च तापरोधी किस्म बसंतकालीन खेती के लिए उपयुक्त है।

कृषि विज्ञान केन्द्रों का प्रभावः विश्वविद्यालय के अधीन कृषि विज्ञान केन्द्र प्रशिक्षण, आन फार्म ट्राइल एवं अग्रिम पंक्ति प्रत्यक्षण के माध्यम से कृषकों को लाभान्वित कर रहा है। कई क्षेत्रों में काफी प्रभावकारी परिणाम प्राप्त हुए हैं, इनमें से निम्न प्रमुख हैं :

बीज प्रतिस्थापनः बिहार की कृषि मुख्य तौर पर लघु एवं सीमांत किसानों पर निर्भर है। यद्यपि की यहाँ के किसान अधिक उत्पादनशील किस्मों का उपयोग मुख्य फसलों जैसे धान, गेहूँ, मक्का, दलहन, तिलहन एवं सब्जियों में करना प्रारंभ कर दिये है, लेकिन अभी तक लगभग दो तिहाई किसान अपने घरों में उपजे बीज पर ही निर्भर करते है। राज्य सरकार कृषि विश्वविद्यालय एवं कृषि विज्ञान केन्द्रों के सहयोग से गुणवत्तायुक्त बीजों के व्यवहार को लोकप्रिय बनाने के लिए योजनाओं का संचालन कर रही है। इसके परिणामस्वरूप 2011–12 में धान में स्थानीय किस्मों का 30 से 35 प्रतिशत तक का विस्थापन अधिक उत्पादनशील प्रभेदों एवं संकर बीजों द्वारा हुई है। ठीक इसी प्रकार से गेहूँ में 60 से 70 प्रतिशत, दलहन में 25 से 30 प्रतिशत, सब्जियों में 45–50 प्रतिशत तक स्थानीय किस्मों का विस्थापन अधिक उत्पादनषील प्रभेदों द्वारा हुई। बीज प्रतिस्थापन योजना का प्रभाव सबसे ज्यादा मक्के में देखने को मिला जहाँ 90 प्रतिशत तक स्थानीय किस्मों का प्रतिस्थापन क्वालिटी प्रोटीन मक्के द्वारा हुई। नवीनतम तकनीकों जैसे धान और गेहूँ में जड़ गहनता प्रणाली, गन्ने की खेती की उन्नत विधि, नेत्रजन, पोटाश एवं स्फुर की संतुलित मात्रा का व्यवहार, गेहूँ बुआई की शून्य जुताई विधि को अपनाने से फसलों की औसत उपज में काफी सुधार हुई है।

बागवानी विकासः भारत में सब्जी एवं फल का उत्पादन एवं क्षेत्र में बिहार का प्रमुख स्थान है। देश के सब्जी एवं फल उत्पादन क्षेत्र में बिहार राज्य की हिस्सेदारी 2005–06 में 8.5 प्रतिशत है। राज्य में सकल फसल क्षेत्र के 10 प्रतिशत में सब्जी एवं फलों की खेती की जाती है लेकिन पूरे फसल उत्पादित आय का 50 प्रतिशत सब्जी एवं फलों के उत्पादन से आता है। बिहार का लीची एवं मखाना उत्पादन में एकाधिकार है। देश में कुल

लीची उत्पादन का 70 प्रतिशत एवं कुल मखाना उत्पादन का 80 प्रतिशत बिहार राज्य से आता है। देश में कुल आम के उत्पादन का 10 प्रतिशत एवं कुल क्षेत्र का 7 प्रतिशत हिस्सेदारी बिहार राज्य का है। बिहार में आम की उत्पादकता 8.75 टन प्रति हेक्टेयर है जो देश की औसत उत्पादकता (6.14 टन प्रति हेक्टेयर) से अधिक है। केला उत्पादन में भी बिहार देश में अग्रणी है और देश के कुल केला उत्पादन का 5 प्रतिशत एवं कुल क्षेत्र का 4 प्रतिशत हिस्सेदारी बिहार राज्य की है। बिहार में बागवानी फसलों में आलू का भी महत्वपूर्ण स्थान है। देश में आलू उत्पादन में बिहार का स्थान तीसरा है। हाल ही में नालन्दा जिला पूरे देश में आलू उत्पादकता में कीर्तिमान हासिल प्राप्त किया है। बिहार में आलू उत्पादन के साथ–साथ अन्य सब्जी जैसे गोबी, बंधागोबी, बैंगन, टमाटर, भिंडी एवं लत्तीदार सब्जी जैसे नेनुआ, कद्दू, कोहरा, खीरा के उत्पादन की प्रचुर संभावनाएँ है। बिहार में 70,000 हेक्टेयर में मसाला फसल जैसे मिर्च, हल्दी, अदरक एवं लहसुन का उत्पादन होता है जो देश के कुल उत्पादन का 10 प्रतिशत है। बिहार राज्य में औषधीय एवं सुगंधित पौधे की खेती की भी असीम संभावनाएँ एवं अवसर प्राप्त हैं। इस संदर्भ में बिहार कृषि विश्वविद्यालय के अधीनस्थ सभी कृषि विज्ञान केन्द्र बागवानी विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए राज्य को 5,00000 (पाँच लाख) गुणवत्तायुक्त रोपण सामग्री उपलब्ध कराया है।

पशुधन एवं मत्सय विकासः बिहार में कृषि के क्षेत्र में पशुधन का महत्वपूर्ण स्थान है जो राज्य के सकल घरेलू उत्पाद का 16 प्रतिशत सृजन करता है। ग्रामीण बिहार में 56 प्रतिशत घरों के पिछवाड़े में गाय, बकरी एवं मुर्गीपालन होता है। पष्शुधन उत्पादन में दूध उत्पादन का स्थान महत्वपूर्ण है जो पूरे उत्पादित मूल्य का 50 प्रतिशत होता है। इसके अलावा राज्य में 69 लाख हेक्टेयर में तालाब एवं 3200 किलोमीटर तक नदियाँ बहती हैं। इसके अलावा बिहार में एक लाख हेक्टेयर में जल निकायें हैं जिनका निर्माण बाढ़, जल जमाव एवं गीली जमीन द्वारा हुई है और मत्सय उत्पादन में उपयोग होता है। गुणवत्तायुक्त मत्सय बीज की अनुपलब्धता के कारण बिहार में वैज्ञानिक पद्धति से मत्सय उत्पादन प्रौद्योगिकी को नही अपना रहे थे लेकिन मत्सय विभाग एवं कृषि विज्ञान केन्द्रों के संयुक्त प्रयास से इसमें काफी सफलता मिली है। मत्सय विकास के क्षेत्र में प्रशिक्षण देकर एवं मत्सय पालकों द्वारा अपनाई हुई उन्नत तकनीकों का आकलन कर कृषि विज्ञान केन्द्र महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है।

जड़ सघनता प्रणाली द्वारा धान का उत्पादनः बिहार कृषि विश्वविद्यालय के अधीनस्थ कृषि विज्ञान केन्द्र जड़ सघनता प्रणाली द्वारा धान उत्पादन तकनीक का आकलन कर यह पाया कि जड़ सघनता प्रणाली की पूरी तकनीक को अपनाने से ज्यादा उत्पादन के साथ–साथ अधिक शुद्ध लाभ प्राप्त होता है। इस तकनीक द्वारा कल्ला की संख्या 30 प्रतिशत प्रति हील वृद्धि, प्रभावकारी कल्लों की संख्या 25–30 प्रतिशत की वृद्धि, 40 प्रतिशत की उत्पादन में वृद्धि एवं 40 प्रतिशत का शुद्ध लाभ प्राप्त होता है जो इन तकनीकों के साथ–साथ जल संरक्षण एवं उचित खरपतवार का भी नियंत्रण करते है। जड़ सघनता प्रणाली में 12 दिनों का धान का बिचड़ा 25 × 25 cm की दूरी पर लगाई जाती है, वहीं पारंपरिक विधि में 30 दिनों का बिचड़ा का रोपण होता है।

गेहूँ में शुन्य जुताई विधिः संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकी के रूप में शून्य जुताई विधि की शुरूआत, धान एवं गेहूँ प्रणाली वाले क्षेत्रों में गेहूँ की उपज में भारी वृद्धि लाई है। कृषि विज्ञान केन्द्र शून्य जुताई विधि की शुरूआत 2005 में मात्र 5 हेक्टेयर में लगा कर की थी जो अब बढ़कर एक लाख हेक्टेयर तक पहुँच चुकी है। इस विधि द्वारा न केवल लागत खर्च में 2500 रू0 प्रति हेक्टेयर की कमी आई है अपितु गेहूँ की बुआई 12–15 दिन आगे करने में सफलता प्राप्त हुई है। इस विधि द्वारा पारंपरिक विधि की तुलना में 12 प्रतिशत तक की

उपज में वृद्धि प्राप्त की जा सकी है। सिंचाई खर्च, भूमि जुताई के खर्च में कमी, बीज में बचत, मजदूरी खर्च में कमी एवं उचित खरपतवार नियंत्रण लगभग 65 प्रतिशत की अधिक आय पारंपरिक विधि की तुलना में प्राप्त हो सकी है।

कृषि विज्ञान केन्द्र एवं आत्मा के सहयोग से शून्य जुताई विधि का आकलन गेहूँ एवं धान की खेती की लाभप्रदता तथा गेहूँ की सामयिक बुआई के लिए पूरे राज्य में किया। शून्य जुताई विधि का परिणाम यह दर्शाता है कि 52 प्रतिशत गेहूँ में और 22 प्रतिशत धान के उत्पादन में पारंपरिक विधि की तुलना में अधिक है।

धान की सहभागी किस्म का प्रसारः सुखाग्रस्त क्षेत्रों के लिए एक भरोसेमंद किस्म खरीफ मौसम के प्रारंभ होने पर कम वर्षापात की स्थिति में शुष्क सहनशील एवं अल्प अवधि की धान की किस्म, सहभागी का बिहार के सुखाग्रस्त जिले विषेशकर कृषि पारिस्थितिकी क्षेत्र 3B में सफलतापूर्वक खेती की गई। मानसून की अनिश्चितता के कारण बिहार के खास कर वर्शा आश्रित उपजाऊ भूमि एवं कम गहराई की नीचली भूमि में सहभागी धान की खेती सफल रही है। बिहार में जहाँ वर्षा आश्रित उपजाऊ भूमि में धान की औसत उत्पादन 1.5 टन/हेक्टेयर से कम एवं कम गहराई की नीचली जमीन में 2 टन/हेक्टेयर से कम उपज होती है वहीं सहभागी धान के आगमन से 0.5 टन/हेक्टेयर की उपज में बढ़ोत्तरी हुई है। मध्यम सुखाड़ एवं 1.0 टन/हेक्टेयर की अत्यंत सुखाड़ की स्थिति में दर्ज की गई है। सहभागी धान पत्ती झोक, पत्रलांक्षण एवं आवरण झुलसा रोग प्रतिरोधी होती है।

अमरूद के बागों की जीर्णोधारः अमरूद के उत्पादन में गिरावट का मुख्य कारण बूढ़े पौधे का होना, पेड़ों का घना एवं एक दूसरे से सटा होना, खराब रखरखाव एवं प्रकाश संश्लेशण की क्षमता में कमी होना है। पेड़ों का काफी घना होना एवं शाखाओं का एक दूसरे मिला होने के कारण सूर्य का प्रकाश पत्तियों पर ठीक तरह से नहीं पड़ता है। कृषि विज्ञान केन्द्र अग्रिम पंक्ति प्रत्यक्षण एवं प्रशिक्षण के माध्यम से पुराने पेड़ों का जीर्णोधार करने का पहल सन् 2012 में लिया। अवांछित एवं अति घने पेड़ों की कटाई छटाई होने सूर्य का प्रकाश समान रूप से सभी पेड़ों पर पड़ा है एवं प्रकाश संश्लेशण एवं फूल आने की क्षमता में वृद्धि हुई है। इस तरह से हस्ताक्षेप से अमरूद उत्पादकता में 9.37 प्रतिशत वृद्धि हासिल हो सकी है और 50,000 प्रति हेक्टेयर लाभ उत्पादन में वृद्धि दर्ज कर प्राप्त की जा सकती है।

खरीफ धान में हरित खादः धान एवं गेहूँ की फसल प्रणाली में अनियंत्रित रासायनिक खादों के प्रयोग से मृदा की उत्पादकता एवं स्वास्थ्य में कमी आनी शुरू हो चुकी है। मिट्टी की उत्पादकता एवं स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए दहलनी फसलों को कृषकों से लगवाने के कारण मृदा की पोषक तत्वों की आपूर्ति क्षमता, कार्बनिक पदार्थ एवं सूक्ष्मजीवों की संख्या में वृद्धि हुई है। मृदा का पी.एच. भी न्यूट्रलाइज हुई है। कृषि विज्ञान केन्द्र 2010 में जिले के विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण एवं अग्रिम पंक्ति प्रशिक्षण के माध्यम से हरित खाद की शुरूआत की। यह पाया गया कि हरित खाद 39 किलो नेत्रजन धान के फसल में बचत की। उत्पादन में बढ़ोत्तरी एवं मृदा स्वास्थ्य में सुधार इस प्रौद्योगिकी को जिलों धान उत्पादन के बड़े क्षेत्रों में फैलाया जा सका है।

टाल क्षेत्रों के लिए मसुर में शून्य जुताई तकनीकः बिहार का टाल क्षेत्र अपने आप में काफी अनूठा है एवं रबी मौसम में मसुर की एकल खेती होती है। टाल क्षेत्रों में चिकनी मिट्टी होने के कारण जुताई में काफी कठिनाई होती है। यदि बुआई शीघ्र न की गई तो नमी खत्म होने से मृदा काफी सख्त हो जाती है। कटोरे के आकार होने के कारण वाष्पीकरण एक मात्र जल निकासी का माध्यम है। कृषि विज्ञान केन्द्र द्वारा मसूर में शून्य जुताई तकनीक से बुआई के बढ़ावा देने से टाल क्षेत्रों में मसूर के उत्पादन का काफी बढ़िया प्रदर्शन

रहा है और काफी बड़े पैमाने पर इस क्षेत्रों में किसानों द्वारा यह तकनीक अपनायी जा रही है। बिहार के कुछ जिलों में मसूर की पैरा खेती एक प्रमुख प्रथा है। आमतौर पर आहर के नाम से जानेवाली निचली जमीन में जल निकासी के उपरांत अक्टूबर एवं नवम्बर की अंतिम सप्ताह में मसूर की बुआई की जाती है। गहरी चिकनी मिट्टी होने के कारण भूमि की तैयारी के समय बड़े–बड़े मिट्टी के ढेले बन जाते है। शून्य जुताई विधि से मसूर की खेती में न केवल सफलता प्राप्त की जा सकी है अपितु 200 प्रतिशत अधिक उत्पादन भी प्राप्त की जा सकी है।

संसाधन संरक्षण के लिए शून्य जुताई विधि द्वारा धान की सीधी बुआईः बिहार में खरीफ धान की बुआई मानसून पर आधारित होने के कारण नर्सरी की तैयारी रोपनी एवं गेहूँ की बुआई में विलंब हो जाती है। धान में सिंचाई की उपलब्धता उत्पादन को प्रभावित करती है। श्रमिक की खासकर जमीन की तैयारी एवं रोपणी के समय समस्या को और अधिक बढ़ा देता है जिसके कारण खेती की लागत में और वृद्धि हो जाती है। शून्य जुताई सह सीड ड्रील तकनीक द्वारा धान की सीधी बुआई कम नमी की अवस्था में धान की खेती की समस्याओं को दूर करने का एक प्रभावकारी उपाय है। कृषि विज्ञान केन्द्र जल की 15 से 20 प्रतिशत एवं श्रमिकों की आवष्यकता कम कर सफल प्रत्यक्षण किया है। इस प्रौद्योगिकी से धान के उत्पादन में 39 प्रतिशत की वृद्धि के साथ लाभप्रदता में भी वृद्धि हुई है।

अधिक लाभप्रदता के लिए खरीफ प्याज की खेतीः बिहार के अधिकांश जिले में मानसून के पहले अतिवृष्टि एवं उसके बाद लंबी सुखाड़ विगत दो वर्षों से आम विशेषता हो गई है। मानसून में अनियमित जलवायु परिस्थिति किसानों को परती भूमि में या छोटे से भू–भाग में अन्य फसल लेने के लिए बाध्य कर दिया है। कृषि विज्ञान केन्द्र खरीफ प्याज का अग्रिम पंक्ति प्रत्यक्षण का आयोजन कर खरीफ में वैकल्पिक खेती की शुरूआत की जिससे बहुत सारे कृषकों को अच्छा मुनाफा प्राप्त करने में सहायता मिली है।

केंचुआ खादः कृषि विज्ञान केन्द्र खेती में रसायन का उपयोग कम करने के लिए जैविक खाद, जैव एजेंट को उत्पादन करने का प्रयास किया है। कृषि विज्ञान केन्द्र प्रशिक्षण एवं प्रत्यक्षण के माध्यम से युवा कृषकों को केंचुआ खाद आधारित उद्यम का विकास किया है साथ ही सब्जी में केंचुआ खाद के उपयोग को बढ़ाने के लिए छोटे किसानों द्वारा वृहत स्तर पर केंचुआ खाद उत्पादन में सहयोग दिया है। इसके परिणामस्वरूप कृषि फार्मो के अपशिष्ट पदार्थो के उचित इस्तेमाल से पूरे कृषि वातावरण को लाभ मिल रहा है।

नील हरित शैवालः कुछ कृषि विज्ञान केन्द्र जैसे भागलपुर एवं लखीसराय धान के उत्पादन में बढ़ोत्तरी के लिए नील हरित शैवाल खाद का प्रयोग शुरू किया है। यह खाद धान के खेत में वातावरण के नेत्रजन का स्थिरीकरण कर धान के उत्पादन में काफी वृद्धि करते हैं। सुखा नील हरित शैवाल का प्रयोग जानवरों को खिलाने में भी होता है जिससे दूध के उत्पादन में वृद्धि होती है।

महिला उद्यमिता का साधन मशरूम उत्पादनः बिहार राज्य के सभी जिलों में महिला समूह की सामाजिक एवं आर्थिक समद्धि के लिए मशरूम उत्पादन एक वरदान साबित हो रहा है। औसतन 510 क्विंटल प्रतिवर्ष ओस्टर एवं दूधिया मशरूम का उत्पादन हो रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में महिला समूहों के द्वारा इस व्यवसाय को अपनाकर न सिर्फ आत्मनिर्भर हो रही है बल्कि अपनी सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति भी सुदृढ़ कर रही है। मषरूम उत्पादन व्यवसाय को अपनाकर महिला समूह अपने बच्चे के विकास एवं क्रय क्षमता को सार्थकपूर्वक बढ़ा रही है।

पादप किस्म संरक्षण एवं किसान अधिकार अधिनियमः बिहार कृषि विश्वविद्यालय के सार्थक प्रयास से 135 पादप किस्म का पंजीकरण पादप किस्म संरक्षण एवं किसान अधिकार के अन्तर्गत किया गया है। ये पादप किस्में राज्य के विभिन्न जिले जैसे लखीसराय, किशनगंज, कटिहार, पटना, औरंगाबाद, नालन्दा, रोहतास, मुंगेर, बाँका, पूर्णिया एवं भागलपुर आदि से एकत्रित की गई हैं। जिसमें से धान की 09 किस्में, गेहूँ की एक किस्म, मक्का के तीन किस्म, तीसी के 6 किस्म, हल्दी के आठ किस्म, लहसुन के चार किस्में, मसूर के 6 किस्में, आम के एक किस्म, पीली सरसों के तीन किस्म, तोरिया के पाँच किस्में एवं बैंगन, टमाटर, प्याज, लोबिया, अरहर, करेला की एक–एक किस्म, अदरक एवं धनिया की दो किस्में सम्मिलित है। विश्वविद्यालय वर्श 2015 के अन्त तक 200 किस्मों का पंजीकरण करने के लिए वचनबद्ध है।

केन्द्रीय कन्द फसल अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, भुवनेश्वर द्वारा पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में कन्द फसलों के उत्पादन हेतु किसान हितैषी तकनीकों का विकास एवं विस्तार

राजशेखर मिश्र

क्षेत्रीय केन्द्र, केन्द्रीय कन्द फसल अनुसंधान संस्थान, भुवनेश्वर, ओडिशा

उष्ण कटिबंधीय कन्द–मूल फसलें फसल प्रजातियों के महत्वपूर्ण समूह हैं जिनके कंदों को मानव भोजन एवं पशु आहार के लिए प्रयोग किया जाता है। इन फसलों का अनाज तथा दलहनी फसलों के पश्चात भोजन के लिए योगदान में तीसरा स्थान है। पूर्वी मैदानी क्षेत्रों हेतु लोकप्रिय कन्दमूल फसलों में शकरकंद, अरबी, जिमीकंद, मिश्रीकंद, रतालू, आरारोट, कसावा आदि फसलें शामिल हैं। कन्द मूल फसलें विकासशील देखों की बड़ी जनसंख्या को खाद्य सुरक्षा प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही हैं। कन्दमूल फसलें भारतवर्ष के पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में किसानों की आजीविका सुधार में महत्वपूर्ण योगदान कर सकती है। कंद फसलें सौर उर्जा को खाद्य उर्जा में परिवर्तित करने की सर्वाधिक क्षमता रखती हैं। कार्बोहाइड्रेट, लवण तथा विटामिन के साथ ही यह अन्य महत्वपूर्ण पोषक तत्व प्रदान करती हैं। साथ ही कन्द फसलों में अनेक प्रकार के औषधीय गुण भी पाए जाते हैं। पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में कंद फसलों के उत्पादन हेतु अनेकों किसान हितैषी तकनीकों का विकास एवं विस्तार क्षेत्रीय केन्द्र, केन्द्रीय कंद फसल अनुसंधान संस्थान, भुवनेश्वर द्वारा निरंतर किया जा रहा है। किसान उपयोगी कुछ तकनीकों का वर्णन इस लेख में किया गया है।

गुणवतता पूर्ण किस्मों का विकास

केन्द्रीय कंद फसल अनुसंधान संस्थान, तिरूवनन्तपुरम, इस संस्थान के भुवनेश्वर स्थित क्षेत्रीय केन्द्र एवं कंद फसलों की अखिल भारतीय समन्वित परियोजना के सामूहिक प्रयास से कंद फसलों की गुणवततापूर्ण किस्मों का निरंतर विकास किया जा रहा है। नीचे दी गई सूचियों में कंद फसलों की गुणवत्तापूर्ण किस्मों का वर्णन किया गया है:

सूची–1: शकरकंद की उन्नत किस्में

किस्म का नाम	विशेषताएं
श्री भद्रा	मध्यम फैलाव वाली, जामुनी गुलाबी छिलका, मक्शन के रंग का गूदा एवं पकने में उत्तम। पैदावार 20–25 टन/हे. और मध्यम फसल अवधि (90–105 दिन)
श्री अरूण	फैलाव वाली, गुलाबी छिलका, मक्खन जैसा गूदा एवं पकने में उत्तम। पैदावार 20–28 टन/हे. और मध्यम फसल अवधि (90–100 दिन)
श्री वरूण	अच्छे फैलाव वाली, सफेद छिलका एवं गूदा, पकने में उत्तम। पैदावार 20–28 टन/हे., मध्यम फसल अवधि (90–100 दिन)

श्री नंदिनी	अच्छे फैलाव वाली, हल्का पीला छिलका, सफेद गूदा एवं पकने में उत्तम। पैदावार 20–25 टन/हे., मध्यम फसल अवधि (100–105 दिन)
श्री वर्धिनी	मध्यम फैलाव वाली, जामुनी छिलका, हल्का नारंगी गूदा
श्री कनका	अच्छे फैलाव वाली, हल्का पीला छिलका और नारंगी गूदा। पैदावार 20–25 टन/हे., मध्यम फसल अवधि (100–110 दिन)
किशन	कंद लम्बे एवं बेलनाकर, जामुनी छिलका तथा सफेद गूदा, पैदावार 16–26 टन/हे., फसल अवधि मध्यम असिंचित एवं सिंचित खेती योग्य, मध्यम, ऊंची एवं पहाड़ी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त
कलिंगा	जामुनी रंग का छिलका एवं सफेद गूदा, असिंचित ऊंची जमीन हेतु उपयुक्त, पैदावार 18–28 टन/हे., मध्यम फसल अवधि (105–110 दिन) मनुष्य एवं पशु आहार तथा स्टार्च हेतु उत्तम
एस टी–13	उच्च उत्पादन क्षमता (14–15 टन/हे.), मध्यम फसल अवधि (110 दिन) एवं उच्च एन्थोसाइनिन मात्रा (90 मि. ग्रा./100 ग्रा.)
एस टी–14	उच्च उत्पादन क्षमता (15–16 टन/हे.), मध्यम फसल अवधि (110 दिन) एवं उच्च बीटा कैरोटीन (20 ग्रा. /100 ग्रा.)
सीआईपीएसडब्लूए–2	उच्च उत्पादन क्षमता (20–24 टन/हे.), मध्यम फसल अवधि (110 दिन) एवं उच्च बीटा कैरोटीन एवं लवण प्रतिरोधी क्षमता

सूची–2: रतालू की उन्नत किस्में

डायोस्कोरिया अलाटा	डायोस्कोरिया इस्कुलेंटा	डायोस्कोरिया रोटंडाटा
श्री कीर्ति		
श्री रूपा	श्री लता	श्री शुभ्रा
श्री शिल्पा	श्री कला	श्री प्रिया
उड़ीसा इलाइट	कोंकन कंचन	श्री धन्या
श्री स्वाती		
सी. ओ. –1		
कोंकन गोलकन्द		

अरवी की उन्नत किस्में

मुक्ताकेशी, श्री रश्मि, श्री पल्लवी, शतमुखी, इंदिरा अरवी, नरेन्द्र अरवी, बी. सी. सी.–1 आदि अरवी की उच्च पैदावार देने वाली किस्में हैं। मुक्ताकेशी अरवी के झुलसा रोग की प्रतिरोधी किस्म है।

अरवी के पत्तों का झुलसा रोग

अरवी की किस्में

अरवी की रोगप्रतिरोधी किस्म मुक्ताकेशी एक रोगग्राही किस्म के साथ

जिमीकंद की उन्नत किस्में

जिमीकंद की गजेन्द्र किस्म पूरे भारत में प्रचलित है। केरल में श्री पदमा तथा पश्चिम बंगाल में कुसुम प्रचलित किस्में हैं।

कंद फसलों की उन्नत खेती

कंदीय वर्ग की किस्मों हेतु बलुही दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है जो कि पूरे पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में प्रायः मिलती है। खेत में पानी का जमाव नहीं रहना चाहिए। जैविक खाद देने से फसलों की गुणवत्ता बढ़ जाती है।

शकरकंद

एंथोसायनिन युक्त शकरकंद की किस्मः एस टी – 13

शकरकंद की खेती खरीफ एवं रबी फलों के रूप में की जाती है पर खरीफ फसल का क्षेत्रफल अधिक है। रोपण सामग्री के रूप में 20–25 से.मी. की लताओं का उपयोग होता है। स्वस्थ लताओं का ऊपरी एवं मध्य भाग ही प्रयोग करना चाहिएं शकरकंद की रोपनी मेढ़ी के ऊपर अथवा दूर बनाकर की जाती है। लताओं को धनुषाकार बना कर इस तरह रोपना चाहिए कि दोनों सिरे मिट्टी से बाहर रहें तथा मध्य भाग मिट्टी के अंदर रहे। लताओं का एक सिरा भूमि के अंदर तथा एक सिरा बाहर रख कर भी रोपनी की जा सकी है। पौधे से पौधे की दूरी 20 से.मी. तथा लाइन की दूरी 90 से.मी. रखना चाहिए। यद्यपि शकरकंद के पौधे अत्यंत तेजी से बढ़ते हैं तथा मिट्टी को ढककर अन्य खरपतवार का बढ़ने से रोकते हैं तथापि फसल की रोपाई के 30 एवं 60 दिन बाद निराई करके हल्की मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। खेत की तैयारी करते समय 5 टन/हे. जैविक खाद देने से मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है। इसके अतिरिक्त 50:25:50 कि.ग्रा./हे. की दर से नत्रजन, फास्फोरस तथा पोटाश की रासायनिक खाद देना चाहिए। नाइट्रोजन तथा पोटाश की आधी–आधी मात्रा दो बार में तथा फास्फोरस की पूरी मात्रा रोपाई के समय दे देनी चाहिए। जिन क्षेत्रों में मिट्टी का पी.एच. कम हो वहां 500 कि.ग्रा./हे. की दर से चूना देना चाहिए। शकरकंद का घुन (साइलस फार्मिकोरियस) एक प्रमुख कीट है जो फसल को भारी क्षति पहुंचा सकता है। प्रौढ़ घुन लताओं एवं कंदों में छिद्र करता है। ग्रब्स सुरंग बनाते हुए भोजन प्राप्त करते हैं। आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त कंद भी कड़ुआहट के कारण खाने योग्य नहीं रहते हैं। भयानक रूप से पीड़ित फसल में 100% तक नुकसान हो सकता है। सामान्य तौर पर 20–25% तक कन्दों का घुन के प्रकोप से नुकसान होता है। निम्नलिखित समन्वित कीट रोकथाम विधि से काफी हद तक इससे होने वाली क्षति से बचा जा सकता है।

शकरकंद के कंद

शकरकंद की फसल

शकरकंद की एसटी–14 किस्म

- लताओं के टुकड़ों को रोपने से पूर्व फेनथ्रिआन अथवा फेनिटोथ्रिआन (0.05%) के घोल में 10 मिनट डुबा कर लगाना चाहिए।
- रोपाई के 60 दिन बाद पौधे के निचले भाग पर मिट्टी चढ़ाना चाहिए।
- सिंथेटिक सेक्स फेरोमोन के ट्रेप्स को प्रति 100 मी क्षेत्र में एक ट्रैप को लगाकर घुन को नष्ट करते रहना चाहिए।
- फसल की समय पर खुदाई करके बचे हुए अवशेष को जला देना चाहिए।

जिमीकंद (सूरन)

अत्यधिक उपज क्षमता, आर्थिक लाभा तथा लगातार बढ़ती बाजार की मांग के कारण सूरन की खेती की लोकप्रियता बढ़ रही है। इसकी सबसे प्रचलित किस्म 'गजेन्द्र' है जिसके कंदों को खते समय मुंह में खुजली नहीं होती। पूर्वी भारत के मैदानी क्षेत्रों में इसकी खेती व्यावसायिक स्तर पर की जा रही है। बलुही दोमट मिट्टी, 1000–1500 मि.मी. वर्षा तथा आर्द्र जलवायु इसकी खेती के लिए उत्तम है। राजेन्द्र जैसी तीक्ष्णता रहित किस्मों को, जिनमें एक ही कन्द होता है, को छोटे आकार के पूर्ण कन्द अथवा बड़े कंदों को छोटे टुकड़ों में काटकर रोपण सामग्री के रूप में प्रयोग किया जाता है। व्यावसायिक खेती के लिए 400–500 ग्रा. के पूर्ण अथवा कटे हुए कंदों को प्रयोग में लाना चाहिए। गााय के कच्चे गोबर में ट्राइकोडर्मा (5 ग्रा./कि.ग्रा.) मिलाकर रोपण सामग्री को उपचारित करके छायादार स्थान में सुखा लेना चाहिए। सूरन की अच्छी उपज के लिए रोपण सामग्री को

सूरन की गजेन्द्र किस्म

सूरन की गजेन्द्र किस्म के कंद

हल्के गहरे गड्ढ़ों (40×40×40 से.मी.) में ट्राइकोडर्मा मिश्रित गोबर की खाद, अच्छी मिट्टी तथा नीम की खली (250 ग्रा. प्रति गड्ढा) डालकर लगाना चाहिए। पौधों और कतार की दूरी 90 से.मी. रखना चाहिए। रोपते समय कंदों को मिट्टी की सतह से 3–4'' की गहराई में लगाना चाहिए। कन्दों को सावधानी पूर्वक तेज औजार से इस तरह काटना चाहिए कि प्रत्येक टुकड़े में कंदों के अग्र भाग को ऊपर रखना चाहिए। रोपनी के बाद धान के पुआल या पत्तों आदि से गड्ढों को ढक देना चाहिए। रोपणी के तीन सप्ताह बाद लगभग सभी पौधे अंकुरित होकर बाहर आ जाते हैं। इस अवस्था में खरपतवार साफ कर, पौधों के चारों तरफ घेरा बना कर रासायनिक खाद देकर मिट्टी चढ़ा देना चाहिए। रासायनिक खाद को नाइट्रोजन, फासफोरस तथा पोटाश 100:80:100 कि.ग्रा./हे. की दर से देना चाहिए। प्रथम बार खाद देते समय नाइट्रोजन तथा पोटाश की आधी मात्रा तथा फास्फोरस की पूरी मात्रा देनी चाहिए। रोपने के लगभग दो माह बाद नाइट्रोजन तथा पोटाश की बची हुइ मात्रा खरपतवार साफ कर देनी चाहिए तथा पौधों के चारों ताफ मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। फसल चक्र में सूरन (मध्य मार्च से नवम्बर मध्य)– गेहूं/सरसों/मटर/चना/मक्का (मध्य नवम्बर से मध्य मार्च) अथवा सूरन (मध्य जून से मध्य जनवरी)– भिंडी/अरवी/मक्का/उड़द/मूंग (मध्य जनवरी से मध्य जून) को सम्मिलित किया जा सकता है। सूरन की गजेन्द्र किस्म लगभग 6 माह में तैयार हो जाती है। सूरन को केला, पपीता, आम, लीची आदि फलों के बगीचे में अंतः फसल के रूप में सुगमता से लगाया जा सकता है।

सूरन के कंदों को ही बीज के रूप में प्रयोग किया जाता है। व्यावसायिक खेती के लिए बीज हेतु प्रयोग होने वाले कंद लगभग आधा कि.ग्रा. के होने चाहिए। इस आकार के बीज कंद प्राप्त करने के लिए 50–100 ग्रा. बजन के कन्दों के टुकड़ों को बीज उत्पादन के लिए प्रयोग करते हैं। बीज उत्पादन के लिए पौधों की दूरी 45 से.मी. तथा लाइन की दूरी 60 से.मी. रखनी चाहिए। बीज उत्पादन की फसल खरीफ के मौसम में असिंचित फसल के रूप में करते हैं। रोपाई से पूर्व ट्राइकोडर्मा मिश्रित कम्पोस्ट तथा नीम की खली खेत में मिला देनी चाहिए। रोपणी के पूर्व कन्दों का उपचार तथा रासायनिक खाद व्यावसायिक खेती की तरह ही करना चाहिए।

विगत कुछ वर्षों में सूरन की खेती बहुत लोकप्रिय हुई है पर कालर राट नाम रोग, जो स्कलेरोसियम राल्फसाई नामक फफूंद से होता है, फसल की उचित सुरक्षा न करने पर काफी नुकसान पहुंचा सकता है। रोग की शुरूआत तने के निचले भाग में जमीन की सतह के पास हल्के भूरे धब्बों के रूप में होती है जो शीघ्र ही बढ़ कर तने के निचले हिस्से को गला देता है जिसके फलस्वरूप पूरा पौधा गिर जाता है। इस रोग से बचाव के लिए खेत में पानी का उचित निकास, स्वस्थ बीज कन्दों का प्रयोग, रोपाई पूर्व कन्दों का ट्राइकोडर्मा मिश्रित गाय के गोबर से उपचार (5ग्रा. ट्राइकोडर्मा पाउडर/प्रति कि. कन्द), प्रति पौधे 250 ग्रा. नीम की खली तथा ट्राइकोडर्मा युक्त कम्पोस्ट के प्रयोग से किया जा सकता है। व्यावसायिक खेती हेतु लगाई गई फसल 5–6 माह बाद बाजार की मांग के अनुसार खुदाई करके कन्दों को निकाल लेना चाहिए परन्तु बीज उत्पादन हेतु लगी फसल की पूरी तरह से सूख जाने के बाद ही खुदाई करना चाहिए। व्यावसायिक खेती द्वारा सूरन की पैदावार 50–60 टन/हे. प्राप्त की जा सकती है तथा 3–4 लाख रूपये/हे. शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

अरवी

पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में अरवी की व्यावसायिक खेती करके अच्छा लाभ प्राप्त किया जा सकता है। अरवी की खेती गर्म जलवायु तथा प्रचुर वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। 900–1200 मि.मी. वर्षा जो 4–5 माह सक्रिय रहे, अरवी के लिए उत्तम होती है। पर्याप्त जैविक पदार्थों से युक्त बहुही दोमट मिट्टी अरवी की खेती के

लिए उत्तम है। अरवी की अनेक किस्में विकसित की गई है पर उपज क्षमता तथा अरवी के झुलसा रोग की प्रतिरोधी किस्म के आधार पर मुक्ताकेशी एक उत्कृष्ट किस्म है जिसके कंदों का उत्कृष्ट स्वाद तथा पकने का गुण अत्यंत उत्तम है। यदि पानी की सुविधा नहीं है तथा पूरी तरह वर्षा पर आधारित खेती करना है तो अरवी की फसल मानसून शुरू होने के साथ अथवा उसके ठीक पहले लगानी चाहिए। सिंचाई की सुविधा होने पर मध्य मार्च में अरवी की फसल लगानी चाहिए। अरवी लगाने से पहले खेत की गहरी जुताई कर कम्पोस्ट मिला कर अंतिम जुताई के बाद खरीफ फसल में 60–45 × 30–45 से.मी. की दूरी पर तथा जायद की फसल में 40 × 30 से.मी. की दूरी पर कन्दों की रोपाई करनी चाहिए। अरवी की फसल में 10 टन/हे. गोबर की खाद तथा 80:60:80 कि.प्रति हे. की दर से नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश की मात्रा उपयुक्त पाई गयी है। कम्पोस्ट तथा फास्फोरस की पूरी मात्रा अंतिम जुताई से पहले देनी चाहिए। नत्रजन तथा पोटाश तीन बराबर भाग में टाप ड्रेसिंग के रूप में देना चाहिए। उर्वरक को पौधे से 10 से.मी. की दूरी पर गोला बना कर देनी चाहिए। रोपाई के 30 एवं 60 दिन बाद खरपतवार साफ कर उर्वरक देकर पौधों के चारों तरफ मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। रोपाई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई कर बूटाक्लोर (5 लि./हे.) अथवा पेंडीमिथालिन (2.5 लि./हे.) खरपतवार नाशी दवा का पूरे खेत में छिड़काव कर देने से 30–40 दिन तक खरपतवार को नियंत्रित कर सकते हैं।

अरवी के पत्तों का झुलसा रोग अरवी की फसल को काफी क्षति पहुंचाता है। यह रोग फाइटोफथोरा कोलोकेसियाई नामक उमाइसिटिस द्वारा उत्पन्न होता है। यह मुख्यतः बरसात में फैलने वाली बीमारी हैं यद्यपि इस रोग का प्राथमिक फैलाव रोग ग्रस्त रोपण सामग्री के प्रयोग से होता है पर द्वितीय और अत्यंत महत्वपूर्ण फैलाव अनगिनत स्वोरैंजिया तथा जूस्पोर्स के कारण होता है। स्पोरैंजिया तथा जूस्पोस्र का वर्षा रितु में लगातार उत्पादन होता रहता है जिसके कारण यह बीमारी अत्यंत तेजी से फैलती है। पत्तों पर शुरूआत में हल्के और छोटे धब्बे बनते हैं जो तेजी से फैलकर पूरे पत्ते को नष्ट कर देते हैं। अनुकूल परिस्थितियों में रोग की शुरूआत होने के एक सप्ताह के अंदर पूरी फसल नष्ट हो जाती है। रूक–रूक कर होती वर्षा, आकाश में बादल और 22–28° से. के बीच का तापमान रोग फैलने के लिए उपयुक्त होता है। पत्तों के नुकसान के अलावा यह रोग कंदों तक पहुंच कर सड़न पैदा करता है। केन्द्रीय कन्द फसल अनुसंधान संसीान के भुवनेश्वर स्थित क्षेत्रीय केन्द्र से इस रोग से बचाव के लिए एक रोग प्रतिरोधी किस्म मुक्ताकेशी विकसित की है जिसके प्रयोग से इस रोग से होने वाली क्षति से बचा जा सकता है। इस रोग से बचने के अन्य उपाय जेसे उपयुक्त खेत का चुनाव, स्वयं उगे हुए अरवी के पौधों को नष्ट करना, स्वस्थ रोपण सामग्री का प्रयोग, बीज हेतु प्रयोग किए जा रहे कंदों का ट्राइकोडर्मा से उपचारित करना तथा मैंकोजेब (0.2%) अथवा मेटालैक्सिल (0.1%) का छिड़काव भी उपयोगी पाया गया है। अरवी की फसल प्रायः 5–6 माह में तैयार हो जाती है। जब पत्तियां पीली पड़कर सूखने लगे तो कंदों की खुदाई कर लेनी चाहिए। बीज उत्पादन हेतु लगी फसल की पूरी तरह सूख जाने के बाद ही खुदाई करनी चाहिए।

रतालू

रतालू (डायोस्कोरिया प्रजाति) की भी सब्जी के रूप में काफी मांग रहती है। प्रमुख रूप से उगाई जाने वाली प्रजातियां डायोस्कोरिया अलाटा, डायोस्कोरिया इस्कुलेंटा एवं डायोस्कोरिया रोटंडाटा है। रतालू के कंदों को उबालकर, भूनकर, तलकर अथवा मसालेदार सब्जी बना कर खाते हैं। रतालू उष्ण जलवायु तथा प्रचुर वर्षा वाले क्षेत्रों में खूब पनपता है। भारतवर्ष का पूर्वी मैदानी क्षेत्र रतालू की खेती हेतु सर्वथा उपयुक्त है। रतालू की रोपाई वर्षा शुरू होने से कुछ पहले कर लेनी चाहिए।

रतालू और मक्के की मिश्रित खेती

रोपाई से पूर्व खेत की गहरी जुताई करके 5 टन/हे. की दर से कम्पोस्ट मिलाकर अंतिम जुताई कर ऊंची मेढ़ियां (60 से.मी. की दूरी) बनाकर मेढ़ियों के ऊपर 3–4'' की गहराई में रोपनी करनी चाहिए। कंदों को 200 ग्रा. टुकड़ों में काटकर रोपनी की जाती है। रोपाई के बाद मेढ़ियों के ऊपर धान का पुवाल, सूखे पत्ते आदि बिछा देने से अंकुर जल्दी निकल आते हैं तथा खरपतवार की समस्या भी कम रहती है। रतालू में 80:60:80 कि./हे. की दर से नत्रजन, फास्फोरस और पोटाश की रासायनिक खाद की मात्रा देनी चाहिए। फास्फोरस की पूरी मात्रा अंतिम जुताई के समय तथा नत्रजन और पोटाश दो बार में देनी चाहिए। रतालू की लताएं काफी लम्बी होती हैं अतः उन्हें बांस या लकड़ी के सहारे की आवश्यकता होती है। सीटीसीआरआई, भुवनेश्वर में किए प्रयोगों में रतालू की दो लाइनों के बीच में मक्का की एक लाइन देने से लताओं को सहारा देने की आवश्यकता नहीं पड़ती। मक्के के हरे भुट्टों को तोड़ कर पौधे को खेत में खड़ा ही छोड़ देते हैं जिसपर रतालू की लताएं चढ़ती रहती हैं। रतालू की फसल 6–7 माह में तैयार होकर सूखने लगती है। इस अवस्था में कंदों की खुदाई की जाती है।

मिश्रीकंद

मिश्रीकंद (पैकेराइजस इरोसस) एक दाल–वर्ग की कंद फसल है। जहां अन्य कन्द फसलें वेजिटेटिव रूप में लगाई जाती हैं वहीं मिश्रीकंद बीज से लगाया जाता हैं मिश्रीकंद की खेती के लिए बहुही दोमट मिट्टी तथा खेत में पानी के उचित निकास की व्यवस्था आवश्यक है। पूर्वी मैदानी क्षेत्र मिश्रीकंद की खेती के लिए उपयुक्त हैं। ताजे खुदे हुए कंद मुलायम, रसीले तथा मीठे होते हैं जिन्हें कच्चे ही सलाद के रूप में खाते हैं। पके हुए बीज में अनेक अल्कल्वाएड तथा कीटनाशी गुण पाए जाते हैं। मिश्रीकंद को खरीफ तथा रबी दोनों सीजन में लगा सकते हैं। पौधे से पौधे की दूरी 15–20 से.मी. तथा लाइनों की दूरी 30–40 से.मी. रखना चाहिए। मिश्रीकंद की राजेन्द्र मिश्रीकंद–1 (आर.एम.–1) पूर्वी मैदानी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इसकी उपज क्षमता 30–35 टन/हे. है तथा कंद सुडौल एवं गोलाकार होते हैं। बुवाई से पूर्व खेत में कम्पोस्ट अवश्य देना चाहिए। नाइट्रोजनः फास्फोरसः पोटाश को 80:60:80 कि./हे. की दर से देना चाहिए। नाइट्रोजन और पोटाश की आधी मात्रा तथा फास्फोरस की पूरी मात्रा अंमित जुताई के समय देनी चाहिए तथा पौधे के चारों ओर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। कंदों के लिए उगाई जा रही मिश्रीकंद की फसल में फूलों को तोड़ते रहना चाहिए। बुवाई के 110–120 दिन बाद कंद की खुदाई कर लेना चाहिए।

कंदीय फसलों का मूल्य बर्धन

कंदीय फसलों से अनेक प्रकार के उत्पाद बनाकर उनका मूल्यबर्धन किया जा सकता है। मण्डशिफ (कसाव) से स्टार्च एवं साबूदाना का निर्माण दक्षिण भारत में व्यावसायिक स्तर पर किया जा रहा है। शकरकंद से गुलाब जामुन व अन्य मिठाइयां, नूडल्स, अचार, पाउडर आदि बना कर मूल्यबर्धन किया जा सकता है। जिमीकंद (सूरन) का अचार तथा डीहाइड्रेटेड क्यूब्स बनाते हैं। केन्द्रीय कन्द फसल अनुसंधान संस्थान, तिरूवनन्तपुरम में स्वयं सहायता समूह को प्रशिक्षण दिया जाता है।

भारत के पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में प्याज एव लहसुन के शोध एवं विकास में राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान की भूमिका

आर.के. सिहं

सहायक निदेशक (उद्यान), एन.एच.आर.डी.एफ., चितेगांव फाटा, पोस्ट–दारणा सांगवी, तालुका–निफाड, जिला–नासिक, महाराष्ट्र

सम्पूर्ण विश्व में प्याज एवं लहसुन की बढ़ती हुई माँग को देखते हुए 3 नवम्बर 1977 को राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान (एन.एच.आर.डी.एफ.) की स्थापना की गई। इस संस्था ने शोंध एवं विकास के क्षेत्र में पिछले 38 वर्षों में प्याज एवं लहसुन पर उल्लेखनीय कार्य किए हैं। जिसका मुख्यालय महाराष्ट्र के नाशिक जिले में स्थित है।

इस संस्थान का मुख्य उद्देश्य प्याज, लहसुन, आलू एवं अन्य सब्जियाँ जैसे भिण्डी, मिर्च, टमाटर आदि निर्यात योग्य फसलों की पैदावार तथा गुणवत्ता को बढ़ाना है। पिछले कई वर्षों से इस संस्था ने प्याज, लहसुन एवं अन्य बागवानी फसलों के विकास में उल्लेखनीय योगदान दिया है तथा पूरे भारतवर्ष में बागवानी क्षेत्र की एक अग्रणी संस्था बनकर उभरी है। इस संस्था के शोधकार्य का केन्द्र मुख्यतः दो राज्यों जैसे – करनाल (हरियाणा) एवं नासिक (महाराष्ट्र) में किया जा रहा है। प्रतिष्ठान ने प्रसार केन्द्र भी स्थापित किये हैं जो जनकपुरी (दिल्ली), करनाल (हरियाणा), देवरिया एवं कानपुर (उत्तर प्रदेश), पटना (बिहार), राजकोट व महुवा (गुजरात), इन्दौर (मध्य प्रदेश), कोटा (राजस्थान), हुबली (कर्नाटक), कर्नूल (आन्ध्र प्रदेश), भटिंडा (पंजाब), कोयम्बटूर (तमिलनाडु), नासिक, सित्रर, लासलगांव (महाराष्ट्र) तथा एक कृषि विज्ञान केन्द्र उजवाँ, दिल्ली मे स्थित है।

पूरे भारतवर्ष में विभिन्न प्रकार की जलवायु पायी जाती है, जिसमें भिन्न–भिन्न सब्जियों का उत्पादन, प्याज एवं लहसुन सहित बड़े पैमाने पर की जा रही है जिसका उपयोग प्रतिदिन सलाद, करी, तल करके, उबल करके, सूप बनाने एवं मसाले के रूप में, शाकाहारी तथा मांसाहारी व्यंजनों में आमतौर पर किया जाता है। विश्व में प्याज का उत्पादन भारत, चीन, अमेरिका, तुर्किस्तान, जापान, इरान तथाा पाकिस्तान जैसे प्रमुख देशों में होता है। भारत प्याज का प्रमुख निर्यातक देश रहा है, ताजी सब्जियों के निर्यात से अर्जित होने वाली विदेशी मुद्रा का लगभग 77% प्याज से प्राप्त होता है। भारत से प्याज का निर्यात मलेशिया, सिंगापुर, खाड़ी के देशों सहित श्रीलंका, बंगलादेश आदि देशों में किया जाता हैं प्याज का मुख्यताः निर्यात भारत के महाराष्ट्र, गुजरात, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक एवं तमिलनाडु राज्यों से होता है।

यद्यपि भारत प्याज एवं लहसुन का परम्परागत निर्यातक देश है, फिर भी प्याज एवं लहसुन का उत्पादन करने वाले विकसित देशों की तुलना में उत्पादन तथा उत्पादकता दोनों कम है, अनुकूल मौसम, प्रजातियाँ,

जलवायु, मिट्टी, प्याज पैदा करने वाली उन्नतशील विधियाँ, बीमारियाँ एवं कीड़े तथा उनके रोकथाम के बारे में ज्ञान की कमी वैसे तो प्रमुख हैं परन्तु कम उत्पादन एवं उत्पादकता, प्रजातियों की विशेषताओं, मौसम एवं खुदाई के बाद उचित रख–रखाव के बारे में किसानों की अनभिज्ञता भी पैदावार की कमी का मुख्य कारण है।

क्षेत्र तथा उत्पादन

क्षेत्रफल एवं उत्पादन की दृष्टि से विश्व में भारत का प्याज उत्पादन में दूसरा स्थान है। पूरे विश्व में प्याज का 86.34 मिलियन टन उत्पादन 4.36 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र पर किया जाता है। विश्व के प्रमुख प्याज उत्पादक राष्ट्रों में भारत 1.21 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर 19.30 मिलियन टन उत्पादन करता है। चीन में सबसे अधिक प्याज का उत्पादन 24.70 मिलियन टन होता है। प्याज के प्रमुख उत्पादक देशों में सबसे अधिक उत्पादकता कोरिया (67.24 टन), अमेरिका (53.91 टन), स्पेन (52.06 टन) एवं जापान (47.55 टन) की है। जबकि भारत की उत्पादकता (16 टन) है। गुजरात की उत्पादकता सबसे अधिक (22.40 टन), हरियाणा (21.30 टन) आदि राज्य आते हैं।

एन.एच.आर.डी.एफ. का मुख्य प्रदेश उद्देश्य

- अधिक उत्पादन एवं भंडराण क्षमतावाली देश के विभिन्न भागों में उत्पादन योग्य एवं विभिन्न देशों में निर्यात योग्य प्रजातियों का चयन करना।
- भूमि, प्रजाति, जलवायु के अनुसार उचित उत्पादन विधि के मानक निर्धारित करना एवं सस्योत्तर प्रबंधन द्वारा नुकसान कम करके प्याज की उपलब्धि बढ़ाना।
- प्याज व लहसुन के प्रमुख रोग एवं कीट का खेतों तथा भंडारों में सर्वेक्षण एवं उनके नियंत्रण के उचित उपाय।
- विदेशी बाजारों का सर्वेक्षण पर उनकी जरूरतों का अध्ययन एवं विभिन्न भागों में उत्पाद व्यय का अभ्यासं
- प्याज व लहसुन तथा अन्य निर्यात योग्य उत्पाद विषयक आधुनिकतम जानकारी किसानों तक पहुँचाना तथा उत्पादकता एवं गुणवत्ता बढ़ाने में मदद करना।
- उच्च गुणवत्तावाले बीजों का निर्माण कर किसानों को वितरित करना तथा अच्छे बीज की उपलब्धि द्वारा उत्पादन बढ़कर निर्यात बढ़ाना।
- एन.एच.आर.डी.एफ. का राष्ट्रव्यापी नेटवर्क तथा प्रशिक्षित वैज्ञानिक एवं तकनीकी अधिकारियों द्वारा देशभर में विकास कार्यक्रम क्रियान्वयन करने की अच्छी संभवना।

अनुसंधान

एन.एच.आर.डी.एफ. भारत सरकार के वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान निदेशालय (डी.एस.आई.आर) द्वारा मान्यता प्राप्त संस्था है। अनुसंधान एवं विकास कार्य की राष्ट्रीय तथा अंर्तराष्ट्रीय स्तर पर सराहना की गई है। एन.एच.आर.डी.एफ. समन्वित उद्यानिकी विकास प्रबंधन कृषि व सहकारिता विभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार के अन्तर्गत राष्ट्रीय एजेन्सी है तथा सब्जियों के विकास कार्य तथा बीजोत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

(क) प्रतिष्ठान द्वारा क्षेत्रों के लिए विकसित प्याज व लहसुन की उन्नतशील प्रजातियाँ

प्याज

1. एग्रीफाउन्ड डार्क रेड
2. एग्रीफाउन्ड लाईट रेड
3. एन.एच.आर.डी.एफ. रेड
4. एन.एच.आर.डी.एफ. रेड–2
5. एग्रीफाउन्ड व्हाइट
6. एन.एच.आर.डी.एफ. रेड–3

लहसुन

1. एग्रीफाउन्ड व्हाइट (जी–41)
2. यमुना सफेद (जी–1)
3. यमुना सफेद–2 (जी–50)
4. यमुना सफेद–3 (जी–282)
5. यमुना सफेद–4 (जी–323)
6. यमुना सफेद–5 (जी–189)

आलू

केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला से आलू की विभिन्न प्रजातियों बीज प्राप्त कर आधार व प्रमाणित बीज में बीजोत्पादन कर पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में आलू विकास का कार्यक्रम एन.एच.आर.डी.एफ. द्वारा किया जा रहा है जिसमें प्रमुख प्रजातियाँ इस प्रकार है:

- कुफरी बहार
- कुफरी अशोका
- कुफरी ख्याती
- कुफरी ज्योती
- कुफरी सिंदूरी
- कुफरी सूर्या
- कुफरी पुखराज
- कुफरी चिपसोन 1 व 4
- कुफरी गरिमा

(ख) सस्यक्रिया एवं पादप क्रिया

- पौधशाला प्रबंधन
- एकीकृत पोषक तत्व एवं उर्वरक प्रबंधन
- जल प्रबंधन व
- खर–पतवार प्रबंधन

(ग) सस्योत्तर प्रबंधन

- कटाई की उचित अवस्था
- सस्योत्तर देखभाल की उचित एवं उचित भंडारण गृह
- प्याज एवं लहसुन की सुखाई के लिए क्योरिंग चैम्बर का विकास

(घ) पौध संरक्षण

- नये रोगों की पहचान तथा नियंत्रण के उपाय
- एकात्मिक कीट नियंत्रण
- एकात्मिक रोग नियंत्रण

(ड) बीजोत्पादन

प्याज की गुणवत्ता बढ़ाने हेतु प्याज के अच्छे बीज की जरूरत को देखते हुए एन.एच.आर.डी.एफ. ने अच्छे बीज निर्माण पर अपने कार्यक्रम की शुरूआत किया। विभिन्न राज्यों में प्याज का उत्पादन एवं गुणवत्ता व अच्छे बीज को बनाने के लिए कार्यक्रम लिए गये और आज राष्ट्रीय बागवानी योजना सहित विभिन्न परियोजनाओं के अंतर्गत 2000 कुंटल तक प्याज बीज व लहसुन की पैदावार पूरे भारत वर्ष में एन.एच.आर.डी.एफ. द्वारा की जा रही है। यह बीज देश की आवश्यकता का सिर्फ 5% है।

एन.एच.आर.डी.एफ. द्वारा विकसित सभी प्रजातियों का मूलबीज प्रतिष्ठान के अनुसंधान प्रक्षेत्रों पर लिया जाता है, तथा अच्छी गुणवत्ता वाले बीज का उत्पादन पंजीकृत किसानों द्वारा एन.एच.आर.डी.एफ. के वैज्ञानिकों के मार्ग–दर्शन के आधार पर पैदा किया जाता है तथा इस बीज का वितरण राज्य सरकारों, सहकारी समितियाँ तथा बीज डीलरों के माध्यम द्वारा किसानों को किया जाता है। अच्छे बीज पैदा करने के लिए किसानों को प्रशिक्षण के साथ–साथ प्रयोगशाला में बीजों का परीक्षण कर अनुसंधान का कार्यक्रम भी बीज की गुणवत्ता बढ़ाने हेतु किया जाता है। भविष्य में संकर बीज का उत्पादन तथा ऊती संवर्धन द्वारा (Tissue Culture) विषाणु रहित लहसुन बीज का उत्पादन करने का प्रयास प्रतिष्ठान द्वारा किया जा रहा है।

लहसुन बीज में बीजोत्पादन के माध्यम से विकास हो रहा है। अच्छे बीज की पैदावार तथा न्यूनतम कली एवं कंद का आकार जो उत्पादकता एवं गुणवत्ता में सुधार लाकर खर्च में बचत करे इसके लिए प्रयास हो रहा है।

प्रतिष्ठान ने देश के विभिन्न भागों में विविध सब्जी एवं प्रजातियों के बीज उत्पादन का प्रयास किया है। इससे यह जानकारी मिली कि कौन से क्षेत्र में सब्जी या किस्म का बीजोत्पादन अधिक लाभदायक होता है।

इससे महत्वपूर्ण जानकारी बीज पैदा करने वाले किसानों को तथा संस्थाओं को काफी लाभ हुआ एवं भविष्य में भी बीजोत्पादन कार्यक्रम के लिए इस जानकारी से लाभ उठा सकते हैं।

(च) प्रतिष्ठान द्वारा प्याज एवं लहसुन बीज से संबन्धित अनुसंधान किये गये जिसका उपयोग करके किसान लाभान्वित हो रहे हैं

1. खरीफ प्याज को बीजोत्पादन के लिए लगाने से पहले कंद का ऊपरी हिस्सा काटकर 1% पोटैशियम नाइट्रेट में डुबोने से अंकुरण जल्दी, फसल अच्छी होना, बीज का अंकुरण बढ़ाना संभव है।
2. भंडारण किये गये प्याज को बीजोत्पादन में लगाने से पहले कार्बेन्डाझिम 0.1% की दर से डुबोने से फफूँद की रोकथाम तथा स्वस्थ फसल तैयार करना।
3. प्याज बीज की कटाई के लिए योग्य अवस्था का निर्धारण करना। जैसे 20–25% काले बीज दिखने पर कटाई तथा 5–6% बीज की नमी आने तक सुखाना।
4. प्याज बीजोत्पादन में आच्छादन एवं टपक सिंचन द्वारा उत्पादन में वृद्धि।
5. लहसुन में 75–100% पत्ती गिरने पर खुदाई एवं भडारण के लिए जालीदार बोरियों का प्रयोग।
6. लहसुन की कलियों को लगाने से पहले 1% पोटैशियम आर्थो फॉस्फेट के घोल में डुबोकर लगाने से उत्पादन में वृद्धि, भंडारण में कम ह्रास।
7. प्याज बीज में अंकुरण क्षमता बढ़ाने हेतु हाइड्रेशन–डिहाइड्रेशन तकनीकी का उपयोग।
8. भिंडी बीज में अुंकुरण क्षमता बढ़ाने के लिए 50^0 सेंटीग्रेट तापमान वाले पानी में 30 मिनट तक प्रक्रिया तथा हायड्रोक्लोरिक ऑसिड या साइट्रिक ऑसिड की प्रक्रिया।

(छ) विस्तार कार्य

- प्रेक्षेत्र प्रदर्शन
- किसान सभा
- किसान गोष्ठी एवं कार्यशाला
- प्रशिक्षण
- प्रदर्शन
- कार्यशाला
- भ्रमण
- मीडिया सपोर्ट

(ज) कन्सलटेन्सी सेवायें

- विभिन्न परियोजनाओं का मूल्यांकन करना
- प्याज निर्यात एवं प्रसंस्करण के लिए प्याज, लहसुन की कान्ट्रैक्ट फार्मिंग आदि।

(ड) प्रयोगशाला द्वारा प्रदत्त विविध सेवायें

एन.एच.आर.डी.एफ. द्वारा पादप रोग, कीटक शास्त्र, पादप क्रिया, जैविक पौध संरक्षण, बीज विज्ञान, मृदा, वनस्पति एवं पानी का विश्लेषण, रासायनों के अवशेषों की जाँच तथा खुम्ब के बीज एवं निर्जमीकृत कम्पोस्ट आदि प्रयोगशालाओं का निमार्ण किया गया है। उपरोक्त प्रयोगशालाओं की सुविधा किसानों एवं निर्यातकों को प्रदान की जाती है।

1. मृदा परीक्षण
2. जल परीक्षण
3. बीज परीक्षण
4. पादप विकृती परीक्षण
5. फल एवं सब्जीयों में गुणवत्ता मानक परीक्षण
6. अंगूर में पेटियोल विश्लेषण
7. अंगूर में बड डिफ्रन्सिएशन
8. अंगूर वाईन परीक्षण
9. फल, सब्जियों, मूंगफली, वाईन आदि में कीटनाशक अवशेष परीक्षण
10. सब्जी एवं फलों पर रोग एवं कीट की जाँच एवं नियंत्रण के उपाय का मार्गदर्शन
11. खुंब के बीज तथा निर्जमीकृत कम्पोस्ट उचित मूल्य पर किसानों को उपलब्ध कराना तथा प्रशिक्षण देना।

(ट) एन.एच.आर.डी.एफ. की उपलब्धियाँ जिससे किसान लाभन्वित हो रहे हैं

1. देश में प्याज एवं लहसुन के क्षेत्र व कुल उत्पादन में वृद्धि
2. प्याज व लहसुन की उन्नत किस्मों का विकास, प्रचार एवं प्रसार
3. किसानों द्वारा उच्च गुणवत्ता वाले बीजों का वृहद मात्रा में प्रयोग
4. प्याज व लहसुन के अच्छे भंडारगष्हों का प्रचार एवं किसानों द्वारा व्यावसायिक स्तर पर उपयोग
5. उचित उत्पादन तकनीक एवं सस्योत्तर क्रियाओं द्वारा प्याज व लहसुन नुकसान कम हुआ तथा खेत व भंडारण में नुकसान कम होने से उपलब्धि में वृद्धि
6. उत्तर भारत में खरीफ प्याज का उत्पादन बढ़ा तथा गुणवत्ता वृद्धि से प्याज का अधिक निर्यात हुआ
7. लहसुन की मोटी कलियों वाली प्रजातियों का विकास, विस्तार तथा उत्तरी भारत के पहाड़ी हिस्से, मध्य प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाण इत्यादि में लहसुन बीज का बड़ी मात्रा में उत्पादन एवं वितरण तथा निर्यात में वृद्धि
8. प्रयोगशाला सुविधाओं के माध्यम से खेती में उचित तकनीक का उपयोग एवं निर्यातकों को अच्छी गुणवत्ता वाले प्याज एवं लहसुन की उपलब्धि
9. प्याज निर्यातकों को निर्यात हेतु ग्रेडिंग पैकिंग करने के लिए तथा भंडारण के लिए पोस्ट हारवेस्ट रीसर्च काम्लेक्स (पी.एच.आर.सी) मे सुविधा होने से निर्यात में वृद्धि

10. प्याज एवं लहसुन के कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग द्वारा किसानों को उचित लाभ तथा सीधे विपणन से संबन्धित किसान को तथा निर्यातक को निश्चित लाभ की संभावना बढ़ी

11. प्याज एवं लहसुन में सूक्ष्म सिंचन पद्धति का बड़े पैमाने पर प्रयोग से पानी की बचत व उत्पादन मे वृद्धि

एन.एच.आर.डी.एफ. द्वारा उत्पादित सब्जी बीज

फसलें एवं प्रजातियाँ	राज्य
आलू – कुफरी पुखराज, कुफरी अशोक प्याज – ॲग्रीफउान्ड डार्क रेड, ॲग्रीफाउन्ड लाईट रेड, एन.एच.आर.डी.एफ.–रेड लहसुन – यमुना सफेद–3, युमना सफेद–4, युमना सफेद–5 धनियाँ – पन्त हरितमा लौकी – नरेन्द्र रश्मी, पूसा नवीन	बिहार
प्याज – ॲग्रीफउान्ड डार्क रेड, ॲग्रीफाउन्ड लाईट रेड आलू – कुफरी पुखराज, कुफरी अशोक धनियाँ – पन्त हरितमा लौकी – पूसा नवीन	झारखंड
प्याज – ॲग्रीफउान्ड डार्क रेड, ॲग्रीफाउन्ड लाईट रेड, एन.एच.आर.डी.एफ.–रेड, एन.एच.आर.डी.एफ.–रेड 2 लहसुन – यमुना सफेद–2, यमुना सफेद–3, युमना सफेद–4, युमना सफेद–5 भिंडी – अर्का अनामिका, आजाद–4 लोबिया – मधुर, काशी कंचन	उड़ीसा
आलू – कुफरी ज्योती, कुफरी बहार, कुफरी आनंद, कुफरी बादशाह प्याज – ॲग्रीफउान्ड डार्क रेड, ॲग्रीफाउन्ड लाईट रेड, एन.एच.आर.डी.एफ.–रेड लहसुन – यमुना सफेद–3, युमना सफेद–4, युमना सफेद–5 भिंडी – पूसा ए–4, वर्षा उपहार लोबिया – सी.पी.–4, पूसा कोमलमेथी – पूसा अर्ली बंचिंग धनियॉ – पन्त हरितमा लौकी – पूसा नवीन, नरेन्द्र रश्मी	उत्तर प्रदेश
प्याज – ॲग्रीफउान्ड डार्क रेड, ॲग्रीफाउन्ड लाईट रेड, एन.एच.आर.डी.एफ.–रेड लहसुन – यमुना सफेद–2, यमुना सफेद–3, युमना सफेद–4, युमना सफेद–5 आलू – कुफरी पुखराज, कुफरी अशोक धनियाँ – पन्त हरितमालौकी – नरेन्द्र रश्मीतुरई – आर.एन. – 1	पश्चिमी बंगाल

सूचना संचार प्रद्योगिकीकरण के द्वारा महिला किसानो के जीविकोपार्जन में उन्नति

एन. विजयलक्ष्मी

मुख्य कार्यपालक पदाधिकारी–सह– राज्य मिशन निदेशक,
बिहार ग्रामीण जीविकोपार्जन प्रोत्साहन समिति, पटना

जीविका ने महिला किसानों के सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान के लिए उन्हें संगठित करके उत्पादक समूहों का गठन किया है जिसके तहत महिला किसानों का क्षमता वर्धन हेतु कम्युनिटी फार्मर फील्ड स्कूल की संकल्पना की गयी है, जिसका उद्देश्य किसानों की पारस्परिक भागीदारी के साथ विकेंद्रित तरीके से, कम लागत में बेहतर उत्पादन, किट प्रबंधन और तकनीकी ज्ञान को बढ़ावा देना है।

उत्पादक समूह के गठन से पहले, Community Farmers Field School (CFFS) ग्राम संगठन स्तर तक सिमित था। अभी तक कुल 1900CFFS हैं जिनमे 700 उत्पादक समूह के स्तर पर एवं 1200 ग्राम संगठन के स्तर पर चलाया जा रहा है। CFFS हर फसल के बने डेमोंस्ट्रेशन प्लाट पर चलाया जाता है। प्रभावी संचार–प्रसार के लिए जीविका ने इसे प्रशिक्षण सामग्री, डेमोंस्ट्रेशन प्लाट और दृश्य–श्रव्य साधनों से जोड़ा है। विभिन्न फसलों की बेहतर खेती, किट पतंगों के नियंत्रण, नयी तकनीक, मिट्टी की गुणवता एवं सिंचाई के ऊपर प्रशिक्षण सामग्री जैसे फ्लिप चार्ट, लीफलेट्स एवं किसान डायरी को किसानो तक उपलब्ध कराया गया है।

जीविका ने "दृश्य–श्रव्य साधनों" के लिए डिजिटल ग्रीन नामक संस्था का सहयोग लिया है जिसने कृषि के अन्दर बिभिन्न विषयों पर स्थानीय भाषा में वैज्ञानिकी रूप से विडियो बनाकर महिला किसानों को नयी तकनीक अपनाने एवं कम लागत में अच्छी उपज लेने के लिए उत्साहित किया है।

उद्देश्य

1. विडियो प्रोडक्शन, एडिटिंग और प्रसार के लिए जीविका स्टाफ तथा कम्युनिटी प्रबंधक (विलेज रिसोर्स पर्सन) को प्रशिक्षित करना।
2. जीविका को कार्यान्विक योजनाओं को बनाने तथा विडियो से किसानों की क्षमता वर्धन की प्रगतिशीलता को मापने में सहयोग करना।

सामुदायिक सदस्यों के बने संगठन की सबसे छोटी इकाई "समूह" से अपने इस इन्टरवेशन की शुरुआत की जिसके तहत विडियो प्रोडक्शन से लेकर प्रसार तक इन्ही महिलाओं के साथ होता है। जीविका ने पहले से ही कृषि सम्बंधित अच्छी तकनीक को महिला किसानो तक पहुचाने के लिए "विलेज रिसोर्स पर्सन" (भी.आर.पी.) का चुनाव कर रखा है। एक भी.आर पी, 50 किसानों को कृषि सम्बंधित गतिविधियों में मदद करता है।

भी.आर.पी. को विडियो प्रोडक्शन एवं प्रसार के विभिन्न पहलुओं पर प्रशिक्षित करते हैं। प्रशिक्षित भी.आर. पी., कृषि के विभिन्न विषयों पर, सामुदायिक किसानों की मांग के अनुसार विडियो बनाते हैं एवं इसका प्रसार करते हैं।

डिजिटल ग्रीन के द्वारा चार बड़े पैमाने पर दिए जाने वाले प्रशिक्षण निम्नलिखित हैं:

1. विडियो प्रोडक्सन ट्रेनिंग
2. मेदियेसन ट्रेनिंग
3. स्टाफ ट्रेनिंग
4. एम.आइ.एस ट्रेनिंग एवं विडियो एडिटिंग ट्रेनिंग

कार्यात्मक पहलुओं के मुख्य बिंदु

1. **प्रसार अनुसूची:** विडियो बन जाने के बाद इसके प्रसार के लिए एक अनुसूची बनायी जाती है जिसके तहत एक ग्राम संगठन के समूहों को एक साथ बैठाकर विडियो दिखाया जाता है। CFFS में जरुरत के अनुसार विडियो का प्रसार किया जाता है।
2. **विडियो प्रोडक्शन टीम का चुनाव:** पहले से ही मौजूदगी. आर. पी में से 3भी. आर. पी. को जिला स्तर पर परीक्षा के द्वारा विडियो प्रोडक्शन टीम के लिए चुना जाता है।

   तत्पश्चात इन्हें विडियो प्रोडक्शन के हर पहलुओं पर प्रशिक्षित किया जाता है। इनकी कुछ जिम्मेवारियां भी तय की जाती हैं जो इस प्रकार हैं:

   - सामुदायिक सदस्यों की सहमति से विडियो बनाने के लिए विषय का चुनाव करना।
   - चुने गए विषय पर, विषय–विशेषज्ञ की मदद से स्टोरी बोर्ड बनाना।
   - स्टोरी बोर्ड बन जाने के बाद, विषय विशेषज्ञ से अनुमोदन कराना
   - विडियो में अभिनय करने वाली महिलाओं का क्षमताबर्धन करना
   - विडियो शूटिंग का समय और जगह तय करना
   - फील्ड पर बने हुए विडियो को जिला स्तर पर बने हुए विडियो एडिटिंग टीम को सौपना

पद्धति

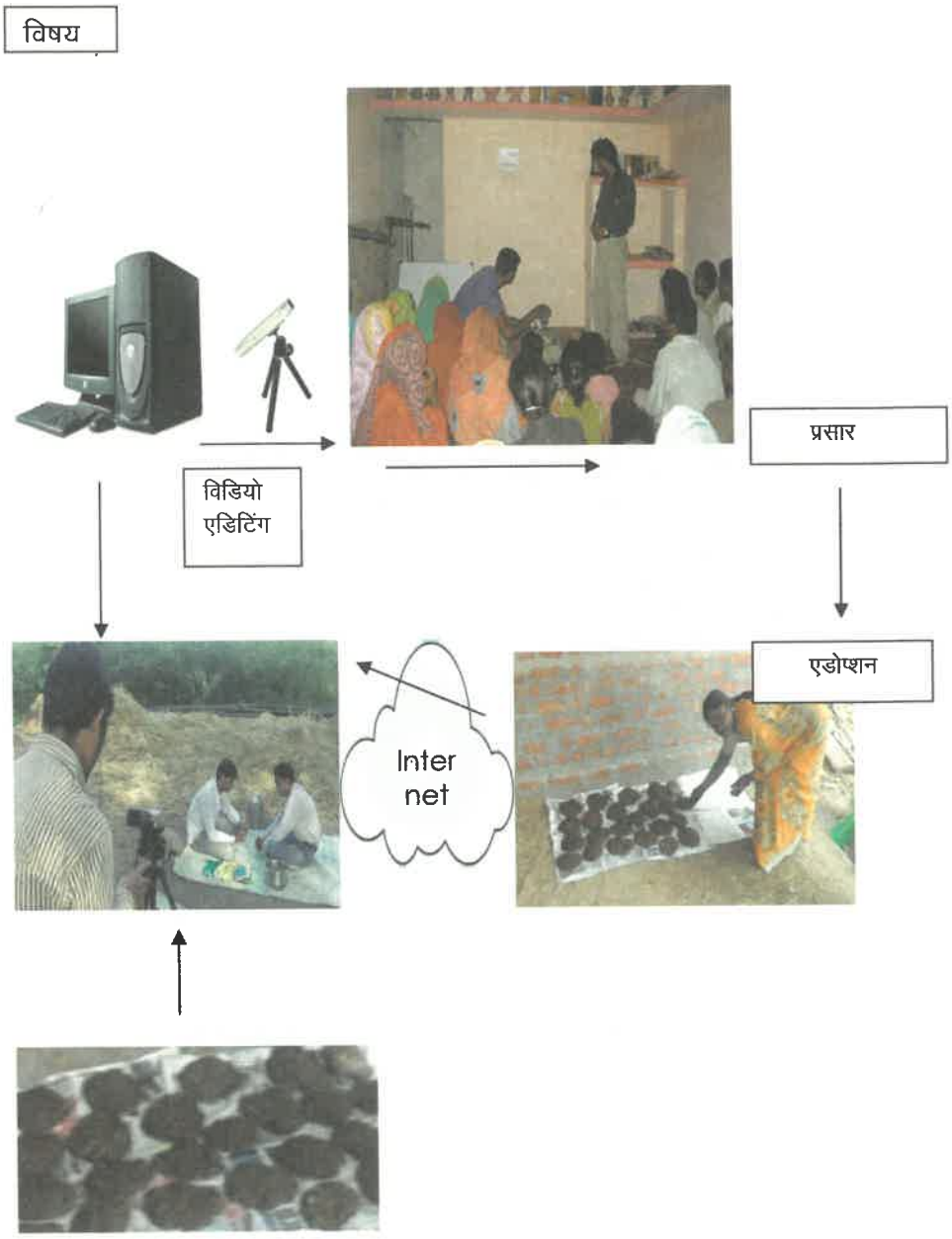

मॉडल

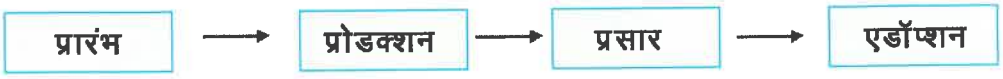

कृषि के बेहतर तकनीकों को सामुदायिक सदस्यों तक पहुचने के लिए जीविका ने हर 50 किसानों पर 1 विलेज रिसोर्स पर्सन (भी.आर. पी) का चुनाव किया है।

जीविका ने भी.आर. पी को पिको प्रोजेक्टर चलाने, प्रसार की विधि एवं ट्रैकिंग रिकॉर्ड फॉर्म भरने की प्रशिक्षन देता है।

भी.आर. पी के कार्य को आंकलन करने के लिए हर 20 भी.आर. पी पर एक मास्टर रिसोर्स पर्सन का भी चुनाव किया गया है जो कृषि के तरीकों एवं नयी तकनीक का बेहतर ज्ञान रखते हैं।

मुख्य परिणाम

1. **विडियो प्रोडक्शनः** अभी तक कृषि के अन्दर 180 विडियो का निर्माण हो चूका है जो स्थानीय भाषा में बनाये गए हैं। विडियो के निर्माण हेतु कुल 5 प्रोडक्शन टीम भी बन चुकी हैं जो अलग अलग जिलों में जाकर वन्ही की स्थानीय भाषा में विडियो बनती हैं

2. **विडियो का प्रसारः** अभी तक कुल 84098 बार सामुदायिक महिला किसानों के समक्ष प्रसारित किया जा चूका है जिसके लिए 1400 भी.आर.पी. प्रशिक्षित किये गए हैं।

एडॉप्शनः अभी तक **129787** महिला किसान दिखाए गए विडियो में से कम से कम किसी एक तकनीक को अपना चुकी हैं।

आगे की परिकल्पनाः जीविका ने डिजिटल ग्रीन के सहयोग से अपने विस्तार प्रणाली को काफी मजबूत बनाया है तथा कम्युनिटी फार्मर फील्ड स्कूल की सोच को भी एक नयी दिशा दी है। एक शोध से ये बात साबित हो चूका है कि विडियो के माध्यम से कृषि के नए तकनीक एवं विधियों को महिला किसान तक पहुचाने में यह मॉडल 10 गुना ज्यादा एवं महिला किसानों को अपनाने के लिए प्रेरित करने में 7 गुना ज्यादा प्रभावकारी साबित हुआ है। (www.changemakers.com/.../digital-green-transforming-agricultural-exte.)

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची द्वारा पूर्वी पठारी क्षेत्रों के किसानों हेतु उपयुक्त तकनीकों का विकास एवं विस्तार

आर.पी. सिंह 'रतन'

निदेशक प्रसार शिक्षा, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची

प्रस्तावना

देश के पूर्वी पठारी क्षेत्रों के अर्न्तगत मुख्य रूप से झारखण्ड का छोटानागपुर एवं संथाल परगना क्षेत्र आता है। इन क्षेत्रों में सिंचाई की कमी रहने के कारण लगभग 85 प्रतिशत कृषि भूमि में वर्षा आधारित एक–फसली खेती की जाती है। भूमि की बनावट उबड़–खाबड़ होने तथा तीव्र वर्षापात के परिणामस्वरूप मृदा क्षरण व्यापक पैमाने पर होता है। उपरी भूमि की मिट्टी अम्लीय है तथा मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा तथा जल ग्रहण क्षमता भी काफी कम है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि पूर्वी पठारी क्षेत्र की मिट्टी में उर्बरता की कमी है। परिणामस्वरूप यहाँ फसलों की उत्पादकता तथा तीव्रता बढ़ाने एवं फसल विविधीकरण करना देश के सिंचित मैदानी क्षेत्रों की तुलना में अधिक चुनौतीपूर्ण है।

बागवानी फसलों के अन्तर्गत विभिन्न सब्जियों की खेती इन क्षेत्रों में अनुकूल जलवायु के कारण वर्ष भर की जाती है। फलों की खेती के मामले में यह क्षेत्र काफी पीछे है। देश के पूर्वी क्षेत्र में फलों के अर्न्तगत कुल क्षेत्रफल का लगभग तीन प्रतिशत में ही यहाँ फलों की खेती की जाती है। कृषि एवं बागवानी के बाद इस क्षेत्र के किसानों की आजीविका का मुख्य आधार पशुपालन है। पशुपालन के अर्न्तगत यहाँ के किसान गाय, भैंस, बकरी, सूअर, भेंड़ एवं कुक्कुट पालन करते हैं। देश के पूर्वी क्षेत्र में उपलब्ध कुल गायों का 48.74, भैंसों का 13.25, बकरियों का 30.93 सूअरों का 3.70, भेड़ों का 3.20 तथा कुक्कुटों का 6.37 प्रतिशत पठारी क्षेत्र में पाया जाता है। कहने के लिये गायों की संख्या पूर्वी क्षेत्र के कुल गायों का लगभग 50 प्रतिशत है, परन्तु इनमें सर्वाधिक देसी नस्ल की हैं जो कद में काफी छोटी हैं तथा इनकी उत्पादन क्षमता की काफी कम (1–2 ली. प्रति दिन प्रति गाय) है। सारांश यह कि पशुपालन जो पूर्वी पठरी क्षेत्र के किसानों की आजीविका का एक मुख्य स्रोत है, दुग्ध, मांस एवं उत्पादन तथा उत्पादकता के स्तर में राष्ट्रीय औसत एवं देश के पूर्वी क्षेत्र के औसत के काफी नीचे हैं। परिणामस्वरूप इन् खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता भी काफी कम है। पशुपालन के प्रमुख उपादन सूखा एवं हरा चारा तथा दाना, आदि की उपलब्धता 25 प्रतिशत से भी कम है।

पूर्वी पठारी क्षेत्र के अर्न्तगत वनों की बहुलता है। यहाँ के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 30 प्रतिशत वनों से आच्छादित है। ये वन ग्रामीण अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं तथा सुदूर वन क्षेत्रों में निवास करनेवाले जनजातीय समुदाय के लोग कृषि एवं पशुपालन के अतिरिक्त अपनी आजीविका के लिये वनों पर निर्भर करते हैं।

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय की स्थापना वर्ष 1981 में अविभाजित बिहार प्रदेश के दूसरे कृषि विश्वविद्यालय के रूप में पठारी क्षेत्रों की कृषि पारिस्थितिकी के अनुरूप कृषि शिक्षा, अनुसंधान एवं विस्तार हेतु की गयी। इस विश्वविद्यालय के द्वारा कृषि, पशुचिकित्सा, वानिकी एवं जैव–प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में शिक्षा, शोध एवं विस्तार के कार्य किए जा रहे हैं।

विभिन्न अनुसंधान कार्यक्रमों एवं परियोजनाओं के माध्यम से विश्वविद्यालय पठारी क्षेत्रों के लिए जिन मुद्दों पर कार्य कर रहा है उनमें प्रमुख हैं– फसल विविधिकरण, समन्वित कृषि प्रणाली के मॉडलों का विकास, अम्लीय मिट्टी प्रबन्धन, कृषि वानिकी, मिट्टी एवं जल प्रबन्धन, गुणवत्तापूर्ण बीज एवं पौध सामग्रियों का उत्पादन एवं वितरण, जैव–प्रौद्योगिकी के माध्यम से फसलों पर जैव एवं अजैव प्रभावों का प्रबन्धन, समन्वित कीट व्याधि एवं रोग प्रबन्धन, सूक्ष्म सिंचाई प्रबन्धन तथा फर्टिगेशन के माध्यम से सब्जी उत्पादन तथा कृषि में यांत्रीकरण।

इसके अतिरिक्त विभिन्न पशुओं जैसे– बकरी, सूअर एवं भेड़ तथा कुक्कुट की उन्नत नस्लों का विकास, कम लागत वाले पशु आहार का विकास, पशु स्वास्थ्य प्रबन्धन, पशु चिकित्सा के विभिन्न आयामों पर अनुसंधान एवं पशु तथा मत्स्य उत्पादों में मूल्य सर्वद्धन।

विश्वविद्यालय की तकनीकी अनुशंसाएँ

झारखण्ड राज्य की भौगोलिक स्थिति व कृषि परिस्थिति के आलोक में कृषि विकास के लिए विश्वविद्यालय निरंतर प्रयत्नशील है। विगत् वर्षों में कृषि, पशुपालन, वानिकी एवं जैव प्रौद्योगिकी के विभिन्न अनुसंधान के उपरांत कृषि विश्वविद्यालय के द्वारा निम्नलिखित तकनीकी अनुशंसाएँ की गई हैं:

- कंडवा रोग से प्रतिरोधी तथा 60 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज देने वाली संकर धान (किस्म–पी.ए. 6444) की खेती की अनुशंसा की गई है। इससे अधिकतम उपज प्राप्त करने हेतु 150:75:90 किलो नेत्रजन, स्फुर एवं पोटाश प्रति हेक्टर का व्यवहार करना चाहिए। बोवाई के समय स्फुर की पूरी मात्रा, 60 किलो पोटाश एवं 85 प्रतिशत का व्यवहार करना चाहिए। गोबर या कम्पोस्ट खाद रोपाई से पहले 5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने पर अकार्बनिक नेत्रजन का प्रयोग न करें। खरपतवार निकासी के बाद शेष नेत्रजन की मात्रा को तीन समान मात्रा में रोपाई के 3, 6 एवं 9 सप्ताह बाद Top Dressing करना चाहिए। दाने के पुष्ट विकास के लिए शेष बची 30 किलो पोटाश की मात्रा वालियों के गाभा अवस्था में Top Dressing करना चाहिए।
- साढ़ा कीट अवरोधी धान की किस्म "ललाट" की खेती की अनुशंसा की गई है।
- श्री विधि तकनीक सं संकर तथा अन्य बौनी किस्म के धान की खेती की अनुशंसा की गयी है। इस विधि से कम से कम 15 प्रतिशत अधिक उत्पादन का लाभ होगा।
- खरपतवार की निकासी तथा कतार में बोई गई रोपा धान में Cono Weeder की तथा श्री विधि से धान की खेती के लिए भी इसकी अनुशंसा की गयी है।
- उपराऊ भूमि में धान की सीधी बुवाई के लिए उर्वरक की अनुशंसित मात्रा 40:20:20 किलो नेत्रजन, स्फुर, एवं पोटाश का व्यवहार करें। अकार्वनिक नेत्रजन उर्वरक की दो समान मात्रा बीज अंकुरण के 15 एवं 30 दिनों के अंतराल बाद खरपतवार की निकासी के बाद Top Dressing द्वारा डालें। गोबर या कम्पोस्ट खाद बोआई से पहले 5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने पर नत्रजन की पहली Top Dressing न करें।

- धान में कंडवा रोग के नियंत्रण के लिए बालियों के गाभा की अवस्था एवं उसके 10 दिन उपरांत दो बार Propiconazol (Tilt) का 0.1 प्रतिशत घोल के छिड़काव की अनुशंसा की गई है। इस रोग के प्रभाव में कमी लाने हेतु नीम एवं करंज केक की खली दो क्विटंल प्रति हेक्टेयर का व्यवहार करने की सलाह दी गई है।
- साढ़ा कीट प्रतिरोधी धान की किस्म ''नवीन'' का चयन किया गया है।
- ऊपराऊ भूमि में सीधी बोआई, के लिए बिरसा विकास–धान 111, मध्यम भूमि में रोपाई के लिए संगधित किस्म ''बिरसा विकास सुगंध धान–2 एवं बिरसा विकास धान– 203 का चयन किया है।
- धान एवं गेहूँ की कटाई के लिए Multi Crop Vertical Reaper की अनुशंसा की गई है।
- धान की दौनी के लिए पैडल थ्रेसर (Pedal Thresher) की अनुशंसा की गई है।
- प्रोटीन गुणवता वाली मक्का की संकर किस्म "HQPM-1' की अनुशंसा की गई है।
- ज्वार के खेती के लिए CSV20 (SPV 1616) किस्म की खेती की अनुशंसा की गई है।
- झारखण्ड में वर्षा आश्रित एवं सामान्य सिंचित तथा देर से बोने की अवस्था और जीरो टीलेज (Zero Tillage) की खेती में गेहूँ की किस्म "K-9107' की खेती की अनुशंसा की गई है।
- सामान्य सिंचित अवस्था एवं देर से बोआई के लिए HUW 468 तथा बिरसा गेहूँ 3 (JKW-15) की अनुशंसा की गई है।
- टिकाऊ खेती के लिए मकई–गेहूँ या सोयाबीन–गेहूँ या धान–गेहूँ फसल प्रणाली में समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन हेतु गोबर की खाद (FYM) या कम्पोस्ट की 5 क्विंटल प्रति हेक्टर की दर से (25 किलो नेत्रजन) की अनुशंसा की गयी है।
- झारखण्ड की अम्लीय भूमि में मकई, गेहूँ, दलहन एवं तेलहनी फसलों की खेती के लिए अनुशंसित अकार्बनिक उर्वरक– नेत्रजन, स्फुर एवं पोटाश के साथ 3–4 क्विंटल प्रति हेक्टर की दर से चुना का प्रयोग कतार में किए जाने की अनुशंसा की गयी है। इससे 20 प्रतिशत उपज में वृद्धि की सम्भावना होगी। जिन खेतों का pH 5.5 से 6.5 है वहाँ 3 क्विंटल तथा जिनका pH 5.5 से कम है वहाँ 4 क्विंटल चूना का प्रयोग करना चाहिए। डोलोमाइट के व्यवहार करने पर दोगुणी मात्रा अर्थात 6–8 क्विंटल प्रति हेक्टर का व्यवहार करने की अनुशंसा की गई है।
- दलहनी एवं तेलहनी फसलों में अधिक उपज प्राप्त करने के लिए नेत्रजन, स्फुर एवं पोटाश की अनुशंसित मात्रा के साथ–साथ 30 किलो प्रति हेक्टर की दर से सल्फर (सिंगल सुपर फास्फेट के रूप में) व्यवहार करने की अनुशंसा की गई है। SSP में 12 प्रतिशत सल्फर होता है।
- दलहनी एवं तेलहनी फसलों की बोआई से पूर्व एक किलो प्रति हेक्टर बोरॉन (10 किलो बोरेक्स) के प्रयोग की अनुशंसा की गई है।
- खरीफ मौसम में उरद की खेती के लिए "Pant U-19è किस्म की अनुशंसा की गई है।
- खरीफ में बाकला (Faba bean) की खेती के लिए "विक्रांत" किस्म की अनुशंसा की गई है।
- खरीफ मौसम में मूंग की खेती के लिए "पूसा विशाल" एवं शरद ऋतु में शैडस् 668६ किस्म की अनुशंसा की गई है।

- खरीफ में राइस बीन (Rice Bean) की खेती के लिए RBL-1 किस्म की अनुशंसा की गई। यह किस्म पीला मोजैक वायरस रोग रोधी है।
- झारखण्ड के लिए सफेद बीज वाली सोयाबीन किस्म "बिरसा सफेद सोयाबीन–2" की अनुशंसा की गई है।
- खरीफ मौसम में कपास की "अरविन्दो" किस्म की पहचान की गई है। इसे शरद ऋतु में धान की कटाई के बाद परती खेतों में दो सिंचाई मात्र के उपयोग से भी उगाया जा सकता है।
- झारखण्ड में राई की खेती के लिए "शिवानी" प्रभेद की अनुशंसा की गई है।
- खरीफ मौसम में अरण्डी की खेती के लिए DCH-9 प्रभेद की पहचान की गई है।
- खरीफ मौसम में Aflatoxin अवरोधी मूँगफली की किस्म "बिरसा बोल्ड" की अनुशंसा की गई है।
- झारखण्ड के लिए देशी चना का प्रभेद "बिरसा चना–3" की पहचान की गई है।
- तीसी एवं चना के उत्पादन में वृद्धि के लिए फली निकलने की अवस्था में यूरिया का 2 प्रतिशत घोल के छिड़काव की अनुशंसा की गई है।
- झारखण्ड में ईख की खेती के लिए "B.O. 147" किस्म की पहचान की गई है।
- रबी मौसम में आलू की खेती के लिए "कुफरी अशोका (सफेद)" एवं कुफरी कंचन (लाल)" प्रभेद की अनुशंसा की गई है।
- झारखण्ड में शकरकन्द की खेती के लिए "बिरसा शकरकन्द–1" की अनुशंसा की गई है।
- झारखण्ड के लिए केरोटीन युक्त व्तंदहम शकरकन्द की किस्म "440127" की पहचान की गई है।
- झारखण्ड में अरवी (कच्चु) की खेती के लिए "बिरसा अरवी–1" किस्म की अनुशंसा की गई है।
- हल्दी की "राजेन्द्र सोनिया" प्रभेद की अनुशंसा की गई है।
- अदरख की "बर्द्धवान" प्रभेद की अनुशंसा की गई है।
- अधिक उपज एवं पीला मोजैक वायरस की प्रतिरोधी भिण्डी की "पूसा–A–4" प्रभेद की अनुशंसा की गई है।
- खरीफ मौसम में टमाटर की खेती के लिए उकठा रोग प्रतिरोधी "BT. 12" प्रभेद तथा रबी मौसम के लिए स्वर्ण लालिमा (स्वयं परागित) एवं स्वर्ण सम्पदा (संकर) प्रभेद की अनुशंसा की गई है।
- पॉली हाउस (Poly house) में खरीफ में खेती तथा शरद ऋतु में छायादार जाली (Shade Net) में शिमला मिर्च खेती के लिए कैलफोर्निया वान्डर किस्म की अनुशंसा की गई है।
- शिमला मिर्च के पौधों के उचित विकास एवं खरपतवार के नियंत्रण के लिए काला पालीथिन मल्च (30 माइक्रोन) को उपयुक्त पाया गया है।
- छायादार जालीदार (Shade Net) में शरद मौसम में टमाटर की खेती के लिए "पंजाब केशरी" किस्म की पहचान की गई है।
- कद्दू (लौकी) के लिए "पूसा नवीन" एवं "अर्का बहार" प्रभेद की पहचान की गई है।

- फ्रेंचबीन की "पन्त अनुपमा" किस्म की पहचान की गई है।
- सब्जी मटर के लिए "काशी नन्दिनी" एवं "PE-6" की पहचान की गई है। इस किस्म में आर्केल प्रभेद की अपेक्षा पहले फूल व फली निकलता है। इसके अलावा बिरसा मटर–1 प्रभेद की भी पहचान की गई है।
- टिशु कल्चर (Tussue Culture) संवर्धित केले की बेहुला (सब्जी वाली) एवं Giant Governor (Table Type) प्रभेद की पहचान की गई हैं।
- अधिक उपजवाली आम की निरंतर फलने वाली "सुदर लंगड़ा" किस्म की अनुशंसा की गई है।
- ऑवला की खेती के लिए "नरेन्द्र ऑवला–7" प्रभेद की अनुशंसा की गई। ऑवला के बगीचा में पर परागण के लिए 10 प्रतिशत "चकिया किस्म" की भी अनुशंसा की गई है।
- Gladiolus फूल की "Candymon" एवं "Jackson Ville Gold" किस्म की अनुशंसा की गई है।
- गुलाब की HT समूह में "Sound" एवं "Monipal" किस्म, फ्लोरीबुण्डा समूह में "Prince" एवं "Cyndia" किस्म तथा Miniature समूह में "Gypsy" एवं "Echo" किस्म की अनुशंसा की गई है।
- Gerbera की खेती के लिए GBR-1 एवं GBR-5 (लाल रंग) एवं छायादार जाली घर के लिए स्नौ फ्लैक (सफेद रंग) किस्मों की अनुशंसा की गई है।
- गुलदाउदी (Chrysanthemum) फूल की खेती के लिए चार किस्मों "किकू बीयूरी", "स्नौबॉल (सफेद), "ऍलफ्रेड वील्सन" एवं "माघी" की अनुशंसा की गई है।
- पशु चारागाह के लिए "चारा बादाम" को लगाने की अनुशंसा की गई है।
- चारा मकई फसल की "अफ्रीकन टॉल" किस्म की अनुशंसा की गई है।
- खरीफ मौसम के लिए चारा फसल प्रणाली के अधीन संकर नेपियर को राइस बीन के साथ खेती करने तथा शरद ऋतु में चारा लोबिया के साथ खेती को सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है।
- बंजर भूमि में "सुबबूल" एवं "जेट्रोफा" की Alley cropping एवं मेंड़ पर खेती की अनुशंसा किया गया है।
- अधिक मांस एवं लाभ के लिए संकर सूकर T x D (देसी एवं टेमवर्थ) की अनुशंसा की गई है।
- समेकित फसल, उद्यानिक फसल, दुधारू पशु, मछली, बत्तख, बकरी, सूकर, पोषणयुक्त बगीचा एवं वर्षा जल संचयन करके तथा तालाब बनाकर नियमित रूप से आय के लिए समेकित कृषि प्रणाली मॉड्यूल की अनुशंसा की गयी है।

विश्वविद्यालय की विस्तार सेवाएँ

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के प्रसार शिक्षा निदेशालय के तत्वावधान में निम्नलिखित प्रसार शिक्षा कार्यक्रमों तथा गतिविधियों का संचालन तकनीकी विस्तार के लिए किया जा रहा है:

- कृषि सलाहकारी सेवाओं के अन्तर्गत किसान की समस्याओं के समाधान के लिए मिट्टी जाँच, पौधा रोग एवं कीट व्याधि निदान, पशु रोग निदान, मौसम एवं बाजार आधारित सलाह आदि सुविधाएँ विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों एवं कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (ATIC) के माध्यम से नियमित रूप से प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त विश्वविद्यालय में स्थापित किसान कॉल सेन्टर के माध्यम से उनकी समस्याओं

का समाधान किया जाता है तथा किसान मोबाईल एडवाइजरी सेवा की व्यवस्था की गई है, जिसके माध्यम से किसानों को टेक्स्ट मैसेज (SMS) द्वारा सामयिक सूचनाएँ प्रदान की जाती हैं।

- किसानों के बीच तकनीकों के विस्तार हेतु विश्वविद्यालय द्वारा कृषि मेलों एवं प्रदर्शनियों के आयोजन किए जाते हैं तथा जन संचार के माध्यमों जैसे रेडियो एवं दूरदर्शन के माध्यम से वैज्ञानिक वार्त्ताएँ भी प्रसारित की जाती हैं। विश्वविद्यालय मुख्यालय में बिरसा हरियाली रेडियो स्टेशन की स्थापना की गयी है, जिसके माध्यम से कृषक सहभागी कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं।
- प्रसार शिक्षा निदेशालय के अर्न्तगत कार्यरत प्रशिक्षण इकाई द्वारा पूर्वी पठारी क्षेत्र के किसानों एवं प्रसार कर्मियों के लिए प्रायोजित तथा माँग आधारित प्रशिक्षण कार्यक्रमों के आयोजन किए जाते हैं। इसके अर्न्तगत कृषि तकनीकों के अतिरिक्त अन्य विषयों जैसे नेतृत्व विकास, समूह निर्माण, सामुदायिक विकास आदि विषयों पर वर्ष भर प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाये जाते हैं।

कृषि विज्ञान केन्द्र

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के नियंत्रणाधीन कुल 16 कृषि विज्ञान केन्द्र हैं। इसके अतिरिक्त झारखण्ड प्रदेश के अन्य आठ कृषि विज्ञान केन्द्र जो विभिन्न गैर–सरकारी संगठनों तथा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के संस्थानों द्वारा संचालित हैं, को विश्वविद्यालय द्वारा सत्तत तकनीकी सहयोग प्रदान किया जाता है। इन कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से विश्वविद्यालय उपयुक्त कृषि, पशुपालन, वानिकी, मत्स्य एवं जलकृषि से सम्बन्धित तकनीकी जानकारियों एवं कौशल का विस्तार पूर्वी पठारी क्षेत्रों में करता है।

कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से जो प्रमुख विस्तार कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं, उनमें सम्मिलित है– किसानों के खेत पर अनुकूली प्रयोग/परीक्षण के माध्यम से तकनीकी आकलन एवं परिष्करण, अग्रिम पंक्ति प्रत्यक्षण के माध्यम से नवीनतम तकनीकों के प्रति किसानों में विश्वास पैदा करना, कृषि विज्ञान केन्द्र के परिसर एवं किसानों के खेत पर कार्यशील कृषकों का प्रशिक्षण, ग्रामीण युवक एवं युवतियों में उद्यमिता विकास हेतु व्यावसायिक कौशल प्रशिक्षण तथा जिला, प्रखण्ड एवं ग्राम स्तर पर कार्यरत प्रसार अधिकारियों एवं कार्यकर्त्ताओं का नवीनतम तकनीकों पर प्रशिक्षण। इसके अतिरिक्त कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से विभिन्न प्रकार की सलाहकारी सेवाओं के साथ–साथ आवश्यक कृषि उपादानों यथा उन्नत बीज, पौध सामग्री, पशुओं के उन्नत नस्लों, मत्स्य बीज, मशरूम स्पॉन, जैव उर्वरक, जैव नियंत्रक आदि का उत्पादन कर उन्हें किसानों को उपलब्ध कराया जाता है।

कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा परीक्षणों एवं प्रत्यक्षणों के उपरान्त उपयुक्त पाई गयी तकनीकों को कृषि प्रौद्योगिकी प्रबन्धन अभिकरण (आत्मा) एवं अन्य सम्बन्धित सरकारी विभागों तथा विस्तार से जुड़ी अन्य गैरसरकारी संगठनों तथा निजी संस्थानों को उपलब्ध कराया जाता है, जिससे कि उन तकनीकों का व्यापक विस्तार किसानों के बीच हो सके।

WHEN IT COMES TO GROWING EXPORT ORIENTED HORTICULTURAL CROPS WE ARE IN THE ROOT

We put efforts to farming for quality production with new concepts in modern horticulture and evolving better techniques to accelerate the production for export as well as to meet domestic requirements.

When we put our steps in farming, we are not confined just to laboratory but extend to educational programmes, field demonstrations and exhibitions also as an extension of our activities in addition to research and development.

For improved scientific farming of export oriented horticultural crops and services our qualified and trained specialists are at your door service everytime. Tell us if you need their services which include supply of high quality seed, mushroom spawns, laboratory services including pesticide residue analysis and various programmes of National Horticulture Mission for vegetable crops and spices as well as market intelligence on onion, potato and garlic through their countrywide spread network of centres.

Contact us for

Onion Seeds :

- Agrifound Dark Red
- Agrifound Light Red
- NHRDF Red
- NHRDF Red-2
- Agrifound White
- Agrifound Rose
- Agrifound Red

Garlic Seed bulbs :

- Agrifound White (G-41)
- Yamuna Safed (G-1)
- Yamuna Safed-2(G-50)
- Yamuna Safed-3 (G-282)
- Yamuna Safed-4 (G-323)
- Yamuna Safed-5 (G-189)
- Agrifound Parvati (G-313)
- Agrifound Parvati-2 (G-408)

As well as quality seeds of different varieties of potato, French Bean, Bhindi, Chili, Methi, Coriander, Cumin, Gourds, Drumstick and many more for improved varieties.

National Horticultural Research and Development Foundation

NHRDF Bhavan, Chitegaon Phata, Nashik Aurangabad Road, Post Darnasangvi, Tal. Niphad, Dist. Nashik - 422 003. Maharashtra (INDIA) Ph. : (02550) 237816, 237551, 202422
Fax : 02550 - 237947 Email : nasik @nhrdf.com, nhrdf_nsk@sancharnet.in
Visit us at : www.nhrdf.com

ललितेश्वर प्रसाद सिंह (ललित सिंह)

गणेश बीज भण्डार

ग्राम-छतवारा कपूर, थाना+पोस्ट-महुआ, जिला-वैशाली (बिहार)

☎ : 9973344176, 9835436001

e-mail : mahua.gbb@gmail.com

बीज प्रमाणन बोर्ड द्वारा प्रमाणित

आलू एवं प्याज का स्वयं उत्पादित आधार बीज (FS_1) फाउण्डेशन उपलब्ध है।

With best compliments from:

NATIONAL BANK FOR AGRICULTURE AND RURAL DEVELOPMENT

(Printing of this document is supported by NABARD)

MISSION:

Promotion of sustainable and equitable agriculture and rural development through effective credit support, related services, institution development and other innovative initiatives.

MAJOR ACTIVITIES

Credit Functions : Refinance for production credit (Short Term) and investment credit (Medium and Long Term) to eligible Banks and financing institutions

Development Functions : To reinforce the credit functions and make credit more productive, development activities are being undertaken through

- Research and Development Fund (R&D Fund)
- Financial Inclusion Fund (FIF)
- Financial Inclusion Technology Fund (FITF)
- Farm Innovation and Promotion Fund (FIPF)
- Farmers' Technology Transfer Fund (FTTF)
- Watershed Development Fund (WDF)
- Rural Infrastructure Development Fund (RIDF)
- Tribal Development Fund (TDF)
- Cooperative Development Fund (CDF)
- Rural Innovation Fund
- Supervisory Functions: NABARD shares with RBI certain regulatory and supervisory functions in respect of Cooperative Banks and RRBs.
- **Supervisory Functions:** NABARD shares with RBI certain regulatory and supervisory functions in respect of Cooperative Banks and RRBs.
- Provides **consultancy services** relating to Agriculture & Rural Development (nabcons@vsnl.net

NABARD Head Office - Plot No. C-24, G-Block, Bandra Kurla Complex, Post Box No- 8121, Bandra (E), Mumbai – 400051

Committed to Rural Prosperity

कान्ति प्रभा कोल्ड स्टोरेज प्रा० लि०
प्रभा कोल्ड स्टोरेज
सरव्दीपुर, मुजफ्फरपुर बिहार
Mob.: 9934269470 / 9798993829/ 9199727884
आलु का आरक्षण प्रारम्भ
किसान भाईयों को लाभ
उचित दर पर प्लास्टिक जालीदार बैग की सुविधा
लोन की सुविधा(बैंक दर पर)
बीज एवं खाने के आलु का सुमिचत रखरखाव
उचित दर पर मशीन द्वारा आलू की छटाई
उचित दर पर जैविक खाद की सुविधा
आधुनिक खेती संबधी प्रशिक्षण

BHATTI AGRITECH

SUKHJIT BHATTI
JALANDHAR
098140 60561

BHATTI AGRITECH

BHATTI AGRITECH

BHATTI AGRITECH

OUR MOTTO *Quality & Service*

Production of Potato Tubers with excellent vigour under disease free environment has been the hallmark of our work culture for past 40 years. The nucleus material, now, is produced in state-of-the-art **Tissue Culture Lab** followed by field multiplication for limited generations under strict guidance and supervision of Scientists and experienced field technicians. No wonder **"B" mark** is a household attraction amongst the potato farmers throughout the country and commands a substantial premium.

Produced & Marketed by : SUKHJIT SINGH BHATTI (Prop.)

BHATTI AGRITECH

Vill. Alipur, P.O. Mithapur, Distt. Jalandhar - 144 022.
Ph : 0181-2681090, 2681091 Fax : 0181-2680647
Mobile : 098140-60561

Email : bhattifarms@gmail.com Website : www.bhattiagritech.com

शालिग्राम भूसारी फार्मर्स फाउण्डेशन
भूसारी रूरल एग्री बिजनेस सेन्टर

उद्यान प्रदर्शन में हिस्सा लेने वाले सभी कृषक बन्धुओं, वैज्ञानिकों तथा आमंत्रित अतिथियों का अभिवादन।

नवनीत रंजन

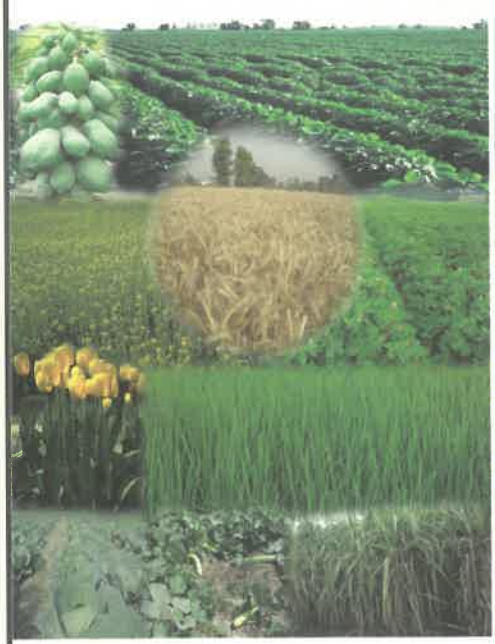

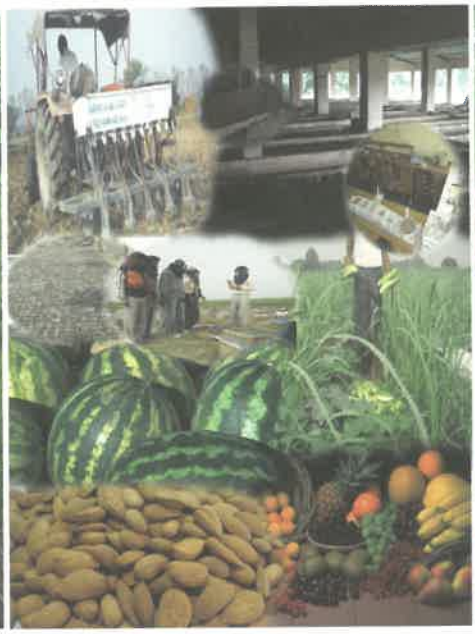

- आलू तथा अन्य सब्जियों, फलों के उत्पादन से शीत भण्डारण तथा विपणन की व्यवस्था एक ही छत के नीचे।
- आलू के उन्नत बीज की वैज्ञानिक विधि से खेती पर सटिक जानकारियाँ उपलब्ध।
- कृषकों की वैज्ञानिक खेती पर प्रशिक्षण एवं मिट्टी जाँच की व्यवस्था।

किसानों का स्वर्णिम भविष्य होगा उनके हाथ।
होंगे, जब कृषि, विज्ञान और व्यापार साथ-साथ।।

नाबार्ड
NABARD

वित्तीय समावेशन-साक्षात कल्पवृक्ष

वित्तीय समावेशन कार्यक्रम

- ★ वित्तीय समावेशन का उद्देश्य प्रत्येक परिवार को बैंकिंग एवं वित्तीय सेवाओं के दायरे में लाना है।
- ★ सर्वप्रथम जिन परिवारों का बैंक में खाता नही है, उनका बैंक में खाता खोलना है।
- ★ आवश्यकता के समय आसान शर्तों एवं कम ब्याज दर पर ऋण सुविधा उपलब्ध कराना है।
- ★ साहूकार/महाजन के कर्ज से मुक्ति दिलानी है।
- ★ बैंक की जमा योजनाओं से जुड़ाव की ओर समाज को प्रेरित करना है।
- ★ वित्तीय समावेशन कार्यक्रम के अन्तर्गत सभी परिवारों को बैंकिंग एवं अन्य उपलब्ध वित्तीय सेवाओं की जानकारी भी उपलब्ध करानी है। जिससे आवश्यकता के समय उनका लाभ प्राप्त किया जा सके।

रुपे किसान कार्ड :-

- कम लागत, कम समय और सस्ते मे आसान ऋण ।
- स्वनिर्धारित उत्पाद की पेशकश ।
- देशीय काडे होने से ग्राहकों का लेन देन से संबधित जानकारी का संरक्षण ।
- बेरोजगार तथा अप्रयुक्त उपभोक्ताओं के लिए इलेक्ट्रानिक उत्पाद का विकल्प ।
- भुगतान चैनलों और उत्पादों के परस्पर परिचालन ।

प्रधानमंत्री जन धन योजना :-

- पैसों की सुरक्षा के साथ ब्याज
- डेबिट कार्ड के जरिए किसी एटीएम से पैसे निकालना
- ₹ 1 लाख का दुर्घटना बीमा (डेबिट कार्ड से संबद्ध)
- कोई न्यूनतम शेष राशि की आवश्यकता नहीं
- भारत में कहीं भी आसानी से पैसे भेजना
- यदि आप हितग्राही हैं तो सरकारी योजनाओं की राशि खाते में सीधे पाना
- 6 माह तक खाते के संतोषजनक परिचालन के बाद ओवरड्राफ्ट की सुविधा पेंशन , बीमा इत्यादि।

"राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक द्वारा प्रबंधित वित्तीय समावेशन फण्ड के अंतर्गत समर्थित"